इस अंक में...

तथ्य और आंकड़े

भट्टों पर काम करने वाले प्रवासी मज़दूरों के अधिकारों की रक्षा के लिए स्रोत और गंतव्य, दोनों राज्यों की सरकारों को मिलकर काम करना चाहिए

ग्राउंड रिपोर्ट: अधिकारों और सुविधाओं तक पहुंच में सुधार

विषेशज्ञों की सलाह: श्री चंदन कुमार के साथ अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर (रोज़गार एवं सेवा परिस्थिति नियमन) कानून, 1979 के क्रियान्वयन पर बातचीत

जून, 2023

अंक चार

ब्रिकवॉल्ड

ईंट की दीवारों के बीच

तथ्य और आंकड़े ...

भारत में एक राज्य से दूसरे राज्य में जाकर काम करने वाले मज़दूरों की सालाना संख्या 2001 से 2011 के बीच दुगनी हो चुकी है (वर्ल्ड इकनॉमिक फोरम, 2017)। अनुमान लगाया जाता है कि 2011 से 2016 के बीच हर साल लगभग 90 लाख लोग मज़दूरी के लिए एक राज्य से दूसरे राज्य पलायन करते हैं (वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, 2017)।
(https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000265866)

साल 2011 की जनगणना के मुताबिक भारत में 6.3 करोड़ बच्चे देश के भीतर ही प्रवासी हैं। उनमें से 3 करोड़ लड़कियां हैं। ये बच्चे नौकरी के लिए या अपने परिवार वालों के साथ, सबसे बड़ी तादाद में महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में जाते हैं।
(https://medium.com/@indiamigration/children-on-the-move-63-million-of-migrants-in-india-are-children-df9d770f2493)

एनएसएस के 68वें दौर (2011-12) के अनुमानों से पता चलता है कि ईंट भट्टों में लगभग 21 लाख मज़दूर काम करते हैं। उन में से 84 प्रतिशत (18 लाख) पुरुष मज़दूर होते हैं।
(https://cprindia.org/wp-content/uploads/2021/12/Migration-to-Brick-Kilns-in-India.pdf)

संपादक की कलम से ...

हमारे देश में मौसमी प्रवासियों की आबादी में महिलाओं और बच्चों की संख्या भी बहुत बड़ी होती है। 2011 की जनगणना के बाद से इस बारे में ताजा जानकारियां उपलब्ध नहीं हैं कि पूरे देश में मौसमी प्रवासी मज़दूरों की संख्या कितनी है और उनमें कितनी महिलाएं और बच्चे हैं। हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने खुद पहल लेकर कोविड लॉकडाउन के दौरान प्रवासी मज़दूरों की समस्याओं को दूर करने के लिए कदम उठाया था मगर जिन आंकड़ों पर उस समय बात की जा रही थी वे भी पुराने थे।

अब प्रवासी मज़दूरों की संख्या का पता लगाने और प्रवासन की पूरी प्रक्रिया पर नजर रखने के लिए फिर से कोशिशें की जा रही हैं। इस मसले पर विस्तृत चर्चा की जरूरत है क्योंकि इसमें उन लोगों की प्राइवेसी और गोपनीयता से जुड़े गंभीर सवाल भी शामिल हैं जिनके बारे में यह डेटा इकट्ठा किया जा रहा है या किया जाएगा। पत्रिका के इस अंक में हम प्रवासी मज़दूरों के आंकड़े इकट्ठा करने से संबंधित बहसों और अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर कानून की विफलताओं से संबंधित बहसों को आपके सामने ला रहे हैं। गौरतलब है कि अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर कानून भी प्रवासी मज़दूरों की रोज़गार और सेवा परिस्थितियों को नियमित करने और मज़दूरों को सुरक्षा प्रदान करने में विफल ही रहा है। प्रवासी मज़दूरों में महिलाएं भी बड़ी तादाद में होती हैं जो अपने परिवार के पुरुषों के साथ एक राज्य से दूसरे राज्य में जाती हैं। अपने न्यूज़लेटर्स के माध्यम से हम इन महिलाओं और बच्चों की तरफ लगातार आपका ध्यान आकर्षित करते रहे हैं।

'ब्रिकवॉल्ड' न्यूज़लेटर सेंटर फॉर लेबर रिसर्च ऐंड ऐक्शन (सीएलआरए), सेंटर फॉर एजुकेशन ऐंड कम्युनिकेशन (सीईसी) और हक: सेंटर फॉर चाइल्ड राइट्स द्वारा शुरू किया गया न्यूज़लेटर है ताकि भट्टों में काम करने वाली महिलाओं और बच्चों के अधिकारों के लिए आवाज उठाने में मदद मिले। इसमें जर्मन फेडरल मिनिस्ट्री फॉर इकनॉमिक क्वॉपरैशन ऐंड डेवलपमेंट (बीएमज़ेड) और तेरे डे होम्स (जर्मनी) से मदद मिली है।

भारती अली

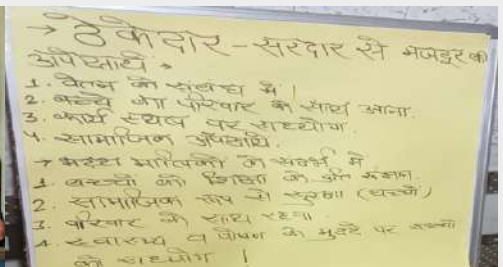

सर्वोच्च न्यायालय का कहना है कि इज़्ज़त से जीने का अधिकार एक मौलिक अधिकार है जो सभी मनुष्यों को मिला हुआ है, लिहाज़ा, ये अधिकार भवन एवं निर्माण मज़दूरों को भी मिलना चाहिए ...

निर्माण मज़दूरों से संबंधित केंद्रीय कानून के लिए राष्ट्रीय अभियान समिति (एनसीसी-सीएल) बनाम भारत सरकार एवं अन्य [रिट याचिका (सिविल) संख्या 1918/2006]

19 मार्च 2018 को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में लिखा है कि:

"**प्रतीकात्मक न्याय** - असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले करोड़ों निर्माण मज़दूरों के लिए कुछ भी नहीं है - **न तो सामाजिक न्याय है, और न ही आर्थिक न्याय**। इसकी वजह बहुत सीधी है। कोई भी राज्य सरकार और केंद्र शासित प्रदेश संसद द्वारा पारित किए गए दोनों कानूनों - भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर (रोज़गार एवं सेवा परिस्थिति नियमन) कानून, 1996 (बीओसीडब्यू कानून) और भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर कल्याण अधिभार कानून, 1996 (अधिभार कानून) - का पालन करने को तैयार ही नहीं हैं। या शायद उनके पास इन कानूनों का पालन करने की क्षमता ही नहीं हैं। इस न्यायालय ने इन कानूनों को लागू करने के लिए बार-बार निर्देश दिये हैं मगर उनका बड़ी बेशर्मी से उल्लंघन किया जाता रहा है।

हमें जानकारी दी गयी है कि निर्माण मज़दूरों को फायदा पहुंचाने के लिए अधिभार कानून के तहत 37,400 करोड़ रूपये से ज़्यादा राशि इकट्ठा की गयी है मगर इन मज़दूरों के लाभ के लिए केवल 9,500 करोड़ रूपये ही खर्च किए गए हैं। बाकी 28,000 करोड़ रूपये का क्या हो रहा है? निर्माण मज़दूरों को इतनी बड़ी रकम से भी कोई फायदा नहीं मिल पा रहा है - क्यों?...

... ये समझने के लिए बहुत दिमाग लगाने की ज़रूरत नहीं है कि जब तक किसी निर्माण मज़दूर को बीओसीडब्ल्यू कानून के प्रावधानों के तहत पंजीकृत नहीं किया जाएगा और उसे किसी पंजीकृत प्रतिष्ठान में नौकरी नहीं मिलेगी तब तक उस मज़दूर को ऐसा कोई भी लाभ नहीं मिल पाएगा जो बीओसीडब्ल्यू कानून के तहत उसे मिलना चाहिए। ये क्रियान्वयन से जुड़ा एक बुनियादी सवाल है। किसी भी राज्य सरकार या केंद्र शासित प्रदेश की तरफ से अभी तक इस पर कोई खास ध्यान नहीं दिया गया है। हमें बस यही बताया गया है कि पूरे देश में आज 4.5 करोड़ से ज़्यादा भवन एवं निर्माण मज़दूर हैं। पहले लगभग 2.15 करोड़ मज़दूरों का पंजीकरण कराया जा चुका था और अब लगभग 2.8 करोड़ मज़दूरों का पंजीकरण कराया जा चुका है। ये आंकड़े कहां से इकट्ठा किए गए हैं, इसके बारे में सिर्फ अंदाज़े ही लगाए जा सकते हैं। कुल मिलाकर बात यह है कि भवन एवं निर्माण मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन उम्मीद से बहुत कम है और इसे केवल एक निराधार अंदाज़ा ही माना जा सकता है। ...

... हमें बताया गया है कि कल्याण बोर्डों के पास बेहिसाब रकम मौजूद है मगर भवन एवं निर्माण मज़दूरों के लिए उसका कोई इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है। ये न केवल एक त्रासदी है बल्कि इंसाफ और अदालत का मज़ाक उड़ाने वाली बात भी है। ...

हालात इस वजह से और भी ज़्यादा गंभीर हो जाते हैं कि निर्माण मज़दूरों में से बहुत सारी महिलाएं भी हैं और उनमें से असंख्य महिलाओं के पास छोटे बच्चे हैं जिनकी उन्हें देखभाल करनी है। इसका मतलब यह है कि ये महिलाएं और बच्चे भी सरकारी तंत्र की उदासीनता का शिकार बन रहे हैं। ये बहुत ही दुखद स्थिति है। ...

... हमारे सामने जो हलफ़नामे आये हैं, उनसे एक सदमे में डाल देने वाली तस्वीर पैदा हो रही है। कुछ कल्याण बोर्डों के पास जो अधिभार इकट्ठा हुआ है उसमें से उन्होंने ऐंट्री टैक्स/वैल्यू एडेड टैक्स (वैट) का भुगतान किया है, निर्माण मज़दूरों के नाम पर वाशिंग मशीनें खरीदी हैं और निर्माण मज़दूरों के लिए लैपटॉप तक खरीद डाले हैं। अदालत तो इन जानकारियों को देखकर अचंभे में है। ... इकट्ठा किए गए अधिभार में से शायद 10 प्रतिशत का इस्तेमाल भी इन मज़दूरों के हित में नहीं किया गया है। यदि वाशिंग मशीनों और लैपटॉप्स की खरीद पर किए गए वाहियात खर्चे को जोड़ लें तो भी। ...

... अभिशासन का मतलब भाषण झाड़ने से नहीं है और न ही सुंदर सुंदर योजनाएं बनाने से है। बल्कि इसका मतलब इस बात से है कि आप क्या कदम उठाते हैं। हमें ये साफ दिखायी दे रहा है कि शासन व्यवस्था ने निर्माण मज़दूरों के अधिकारों को पूरी तरह धराशायी कर दिया है। और भी बड़ी बात ये है कि पिछले 20 साल के दौरान निर्माण मज़दूरों की संख्या में पांच गुना इज़ाफ़ा हो चुका है। यह संख्या खुद श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय ने दी है। सरकार की ज़िम्मेदारी तो स्पष्ट है - समाज के इस असुरक्षित तबके के लाभ और कल्याण के लिए संसद ने जो कानून पारित किए हैं उनको दमदार ढंग से लागू किया लाए। मगर अब तक की प्रगति से पता चलता है कि सरकार एक बार फिर संसद की उम्मीदों पर खरी नहीं उतर पाई है। जब तक सरकार के पास एक ठोस बदलाव लाने की दृढ़ इच्छाशक्ति नहीं होगी तक तक इस दिशा में कामयाबी नहीं मिलेगी। यह सरकारी लापरवाही निर्माण मज़दूरों के शोषण से कम नहीं है। और अगर खुद सरकार ही मज़दूरों का शोषण करने का रास्ता अपनाती है तो समाज के ऐसे कमज़ोर तबके के लिए कोई उम्मीद बाकी नहीं रहेगी। ...

... इज़्ज़त की जिंदगी हर इंसान का मौलिक अधिकार है और इन इंसानों में निर्माण मज़दूर भी शामिल हैं। इसी बात को मद्देनज़र रखते हुए हमें इन दोनों कल्याण एवं लाभकारी कानूनों को समझना और लागू करना चाहिए। ..."

निर्माण मज़दूरों के लिए केंद्रीय कानून हेतु राष्ट्रीय अभियान समिति (एनसीसी-सीएल) बनाम भारत सरकार एवं अन्य [रिट याचिका (सिविल) संख्या 318/ 2016] में जारी किए गए आदेश	उत्तरदायी अधिकारी/विभाग
प्रतिष्ठानों और निर्माण मज़दूरों का पंजीकरण	
एक ऐसी पंजीकरण व्यवस्था लागू की जाए जिसमें मज़दूरों और उनको नौकरी देने वाले प्रतिष्ठान, दोनों का एक निश्चित समयसीमा के भीतर पंजीकरण कराया जा सके। यह समयसीमा संबंधित विभागों द्वारा तय की जाएगी मगर इसमें बिल्कुल देरी नहीं होनी चाहिए। राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों को चाहिए कि वे निर्माण मज़दूरों और प्रतिष्ठानों के पंजीकरण के लिए पंजीकरण अधिकारियों को नियुक्त करें।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय, राज्य सरकार एवं केंद्र शासित प्रदेश
अधिभार वसूली की मशीनरी और मज़बूत की जाए	
इस आशय की कोई वजह दिखाई नहीं देती कि औपचारिक व अनौपचारिक, दोनों क्षेत्रों के जो प्रतिष्ठान निर्माण गतिविधियों में सक्रिय हैं वे अधिभार क्यों न अदा करें जबकि वे निर्माण मज़दूरों की सेवाओं का लाभ ले रहे हैं। इसी तरह, ये मानने की भी कोई वजह नहीं है कि इन प्रतिष्ठानों में काम करने वाले निर्माण मज़दूरों को बीओसीडब्ल्यू कानून और दूसरे कानूनों के तहत निर्धारित लाभ और अधिकार क्यों नहीं मिलते। अगर रजिस्ट्रेशन व्यवस्था और वसूली की व्यवस्था मज़बूत हो और अपनी पूरी ताकत से काम करे तो अभी के मुकाबले बहुत ज़्यादा अधिभार इकट्ठा किया जा सकता है।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय, राज्य सरकारें तथा केंद्र शासित प्रदेश
निर्माण मज़दूरों के लिए एक आदर्श योजना तैयार की जाए	
निर्माण मज़दूरों के फायदे के लिए बहुत सारी योजनाएं तैयार करने की बजाय एक समग्र आदर्श योजना तैयार करना कहीं बेहतर होगा। इसके लिए सभी संबंधित पक्षों से बात करना ज़रूरी है जिनमें एनजीओ (गैरसरकारी संगठनों) से बात करना भी ज़रूरी है क्योंकि वे निर्माण मज़दूरों के बीच ज़मीनी स्तर पर काम कर रहे हैं। यह आदर्श योजना समग्र, क्रियान्वयन के लिए आसान और व्यावहारिक होनी चाहिए। उसमें भारी-भरकम कागज़ी कवायद नहीं होनी चाहिए। इस योजना में शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, वृद्धावस्था और विकलांगता पेंशन तथा अन्य लाभों को भी संबोधित किया जाना चाहिए जो कि भारत के संविधान में दिए गए सम्मानजनक जीवन के आश्वासन को पूरा करने के लिए ये बहुत ज़रूरी सवाल है। यह आदर्श योजना सभी संबंधित पक्षों, यानी राज्य सकारों, केंद्र शासित प्रदेशों और कल्याण बोर्डों को उपलब्ध करायी जा सकती है। सभी संबंधित पक्षों को उसमें ज़रूरत के मुताबिक संशोधन करने की छूट भी दी जा सकती है। आदर्श योजना तय करके एक निश्चित समयसीमा के भीतर जारी की जाए और उसका बड़े पैमाने पर प्रचार किया जाए। इसको जारी करने की समयसीमा श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय को तय करनी होगी और यह योजना अगले 6 माह के भीतर, मगर किसी भी सूरत में, 30 सितंबर 2018 से पहले-पहले तैयार हो जानी चाहिए।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय
प्रभावी लेखापरीक्षा करवाना, जिसमें सामाजिक लेखापरीक्षा भी शामिल है	
सीएजी को बीओसीडब्ल्यू कानून के क्रियान्वयन से संबंधित समस्याओं का पूरा जायज़ा लेना चाहिए ताकि इसका प्रभावी और असरदार ऑडिट (लेखापरीक्षा) हो सके। यह ऑडिट इसलिए और भी ज़रूरी है क्योंकि इस कानून के तहत बहुत बड़ी धनराशि आती है।	नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) [कम्प्ट्रोलर ऐंड ऑडिटर जनरल (सीएजी)]
बीओसीडब्ल्यू कानून का सोशल ऑडिट कराया जाए। सीएजी द्वारा अन्य योजनाओं के सामाजिक ऑडिट के लिए जो दिशानिर्देश तय किये गये हैं (उदाहरण के लिए नरेगा, 2005 के सामाजिक ऑडिट के मानक तैयार करने वाले कार्यबल की रिपोर्ट) उनको बीओसीडब्ल्यू कानून के क्रियान्वयन का सामाजिक ऑडिट करने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय, राज्य सरकारें तथा केंद्र शासित प्रदेश

सामान्य निर्देश	
1. अगर अभी तक राज्य सलाहकार समिति का गठन नहीं किया गया है तो इसका गठन किया जाए। राज्य सलाहकार समिति अपने कामों के निर्वाह के लिए नियमित रूप से मीटिंग करेगी। केंद्रीय भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर (रोज़गार एवं सेवा परिस्थिति नियमन) नियमावली, 1998 के नियम 20 में कहा गया है कि केंद्रीय सलाहकार समिति की मीटिंग हर 6 महीने में कम से कम एक बार ज़रूर होगी। इस प्रावधान को प्रादेशिक सलाहकार समितियों की बैठकों के लिए भी एक दिशानिर्देश की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है।	राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश
2. एक एक्सपर्ट कमेटी (विशेषज्ञ समिति) का गठन किया जाए और अगर अभी तक बीओसीडब्ल्यू कानून की धारा 62 के तहत वैधानिक नियम नहीं बनाए गए हैं तो उनको फौरन तय किया जाए। इस एक्सपर्ट कमेटी का गठन, वैधानिक नियमों का निर्धारण भी निश्चित समय के भीतर हो जाना चाहिए। ये दोनों काम अगले 6 माह के भीतर और अधिकतम 30 सितंबर 2018 तक कर लिए जाने चाहिए।	राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश
3. राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों को चाहिए कि वे निर्माण मज़दूरों और प्रतिष्ठानों के रजिस्ट्रेशन के लिए पंजीकरण अधिकारी नियुक्त करें। ये बीओसीडब्ल्यू कानून और अधिभार कानून के क्रियान्वयन का बहुत महत्वपूर्ण पहलू है।	राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश
4. प्रत्येक राज्य सरकार और केंद्र शासित प्रदेश को चाहिए कि वे बीओसीडब्ल्यू कानून की धारा 18 के अनुसार एक कल्याण बोर्ड का गठन करें। इस बोर्ड का गठन किसी कार्यकारी आदेश के ज़रिए नहीं हो सकता। कानून के मुताबिक यह कल्याण बोर्ड एक स्थायी संस्था होगी। इसलिए कल्याण बोर्ड के गठन के लिए कानूनी प्रावधानों का पालन करना होगा।	राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश
5. प्रत्येक राज्य सरकार और केंद्र शासित प्रदेश को निर्माण मज़दूरों के हित में एक कल्याण निधि का गठन करना चाहिए। इस निधि का इस्तेमाल कैसे किया जाएगा, इसके बारे में नियम तय किए जाएं।	राज्य सरकारें और केंद्र शासित प्रदेश
6. सभी निर्माण मज़दूरों को आइडेंटिटी कार्ड (पहचान पत्र) जारी किया जाए और उनका बीओसीडल्यू कानून की धारा 12 के अनुसार पंजीकरण यानी रजिस्ट्रेशन किया जाए। श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय का प्रस्ताव है कि प्रत्येक निर्माण मज़दूर को एक यूनिवर्सल एक्सेस नंबर जारी किया जाए। यूनिवर्सल एक्सेस नंबर कितना कारगर होगा या नहीं इसके बारे में हम कोई टिप्पणी या राय देने की स्थिति में नहीं हैं। लिहाज़ा, हम इस मुद्दे को खुला रखेंगे और श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय को ये तय करना होगा कि मज़दूरों की पहचान और रजिस्ट्रेशन के लिए एक सार्थक और प्रभावी व्यवस्था तय करें।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय
7. श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय निर्माण मज़दूरों को प्रसूति लाभ कानून, 1961; न्यूनतम मज़दूरी कानून, 1948; कर्मचारी राज्य बीमा कानून, 1948; कर्मचारी प्रोविडेंट फंड एवं मिश्रित प्रावधान कानून, 1952; और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी कानून, 2005 के लाभ मुहैया कराने के लिए हर संभव प्रयास करेगा।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय
8. श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय को इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि रेलवे, डिफेंस (रक्षा) और अन्य प्रतिष्ठानों में भारत सरकार के जो प्रोजेक्ट चल रहे हैं उन्हें भी बीओसीडब्ल्यू कानून के दायरे में लाया जाए।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय
9. श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय ने बीओसीडब्ल्यू कानून के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए 9 सितंबर 2015 को आदेश जारी करके एक मॉनिटरिंग कमेटी का गठन किया था। इस मॉनिटरिंग कमेटी को बीओसीडब्ल्यू कानून, अधिभार कानून के प्रावधानों और इस अदालत द्वारा जारी किए गए निर्देशों का पालन करने के लिए सक्रिय रूप से काम करना चाहिए। इस कमेटी की बैठकें जल्दी-जल्दी होनी चाहिए और किसी भी स्थिति में तीन महीने में कम से कम एक बैठक तो ज़रूरी होनी चाहिए क्योंकि हज़ारों करोड़ रूपये की रकम का इस्तेमाल तक नहीं हो पा रहा है और कई जगह तो उसका दुरुपयोग भी हो रहा है। इसीलिए इस कमेटी की बैटक ज़्यादा जल्दी-जल्दी और तीन महीने में कम से कम एक बार ज़रूर होनी चाहिए।	श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय

भारत सरकार
श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय
लोकसभा
अतारांकित प्रश्न संख्या 5182
03.04.2023 को उत्तर देने के लिए
उद्योगों में बाल मज़दूरी

5182. श्री लावू श्रीकृष्णा देवरायलु:

क्या श्रम एवं रोज़गार मंत्री यह बताने का कष्ट करेंगे:

(क) क्या सरकार इस बात से अवगत है कि मानवाधिकार आयोग के अनुसार आज भी हमारे देश में लगभग 1.4 करोड़ बच्चे गुलामों जैसी नौकरी कर रहे हैं। इनमें 14 वर्ष के कम उम्र के बच्चे भी शामिल हैं। यह स्थिति संविधान के अनुच्छेद 24 का स्पष्ट उल्लंघन है जिसमें बाल मज़दूरी पर पूरी तरह पाबंदी का ऐलान किया गया है;

(ख) यदि हां, तो सरकार ने ऐसे उद्योगों और उद्यमों की शिनाख्त के लिए क्या कदम उठाए हैं जिनमें इन बच्चों से मज़दूरी करायी जा रही है;

(ग) क्या यह सच है कि बाल मज़दूरी के ज़्यादातर मामले ईंट भट्टों और चूड़ी उद्योग में पाए गए हैं? यदि हां, तो क्या सरकार ने इस तरह के मालिकों के खिलाफ किसी तरह की सख्त कार्रवाई की है?

(घ) पिछले तीन साल के दौरान मज़दूरी करते पाये गये बच्चों का राज्यवार विवरण दें; तथा

(ड) क्या सरकार बाल मज़दूरी करने वाले बच्चों के पुनर्वास और उन्हें अच्छी शिक्षा मुहैया कराने के लिए कोई नीति तैयार करने जा रही है?

उत्तर

(क) से (ग): सरकार बाल मज़दूरी को खत्म करने के लिए एक बहुआयामी रणनीति पर काम कर रही है। इसमें वैधानिक और कानूनी प्रावधान, पुनर्वास और सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा मुहैया कराने के साथ-साथ बच्चों के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए उनको दूसरी योजनाओं के साथ जोड़ने के लिए भी काम किया जा रहा है। सरकार ने बाल मज़दूरी (निषेध एवं नियमन) कानून, 1986 पारित किया है। 2016 में इस कानून में संशोधन भी किया गया था। अब इस कानून को बाल एवं किशोर न्याय (निषेध एवं नियमन) (सीएएलपीआर) कानून, 1986 के नाम से जाना जाता है। इस कानून में किसी भी व्यवसाय और प्रक्रिया में 14 साल से कम उम्र के बच्चों से काम कराने पर पूरी पाबंदी लगायी गयी है। इसके अलावा, 14 से 18 साल के बच्चों से किसी भी तरह के खतरनाक व्यवसायों और प्रक्रियाओं में काम करने को निषिद्ध घोषित किया गया है। इस कानून के उल्लंघन करने वाले मालिकों को कड़ी सज़ा देने और इस तरह के अपराधों को संज्ञेय अपराध मानने का भी प्रावधान किया गया है।

इसके अलावा, सीएएलपीआर कानून, 1986 के भाग-क में ईंट भट्टों को भी शामिल किया गया है। इस कानून में प्रावधान किया गया है कि किशोर-किशोरियों को ईंट भट्टों में मदद के लिए मज़दूरी पर नहीं रखा जा सकता। इस कानून की अनुसूची-भाग-ख में चूड़ी और कांच उद्योग को भी शामिल किया गया है। इस सूची में ऐसे व्यवसायों और प्रक्रियाओं की सूची दी गयी है जिनमें बच्चे पारिवारिक उद्यमों में भी काम नहीं कर सकते (भाग-क के अलावा)।

(घ): राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड् ब्यूरो (एनसीआरबी) द्वारा प्रकाशित "क्राइम इन इंडिया" के अनुसार साल 2019, 2020 और 2021 में बाल एवं किशोर श्रम (निषेध एवं नियमन) कानून, 1986 के अंतर्गत क्रमशः 772, 476 और 613 मामले दर्ज किए गए थे। इस बारे में राज्यवार ब्यौरा परिशिष्ट में दिया गया है।

(ड): श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय द्वारा नैशनल चाइल्ड लेबर प्रोजेक्ट (एनसीएलपी) योजना को भी गंभीरता से लागू किया जा रहा है ताकि ज़िला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में गठित ज़िला प्रोजेक्ट सोसाइटियों के ज़रिए बाल मज़दूरों का पुनर्वास किया जा सके। एनसीएलपी योजना के तहत 9-14 आयु वर्ग के बच्चों को काम से आज़ाद/बरामद करके उनको एनसीएलपी स्पेशल ट्रेनिंग सेंटर (एसटीसी) में दाखिल कराया जाता है जहां उन्हें ब्रिज एजुकेशन, वोकेशनल ट्रेनिंग, मिड डे मील, वजीफा और दवाइयां वगैरह दी जाती हैं। इसके बाद उन्हें औपचारिक शिक्षा व्यवस्था से जोड़ दिया जाता है। 01.04.2021 से एनसीएलपी योजना को समग्र शिक्षा अभियान (एसएसए) के अंतर्गत समाहित कर दिया गया है। आगे से जो भी बाल मज़दूर रिहा कराए जाएंगे उनको एसएसए के अंतर्गत क्रियान्वित एसटीसी के माध्यम से औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में शामिल किया जाएगा।

स्रोत: https://sansad.in/getFile/loksabhaquestions/annex/1711/AU5182.pdf?source=pqals

संसदीय प्रश्नों के उत्तर में अब इस बात की जानकारी नहीं दी जाती है कि श्रम एवं रोज़गार मंत्रालय द्वारा कितने बाल मज़दूरों को रिहा कराया गया, बाल मजदूरी कानून के उल्लंघन की कितनी घटनाएं दर्ज की गयी हैं और मंत्रालय ने कितने लोगों के खिलाफ कार्रवाई की और कितने लोगों को सजा मिली। इस तरह की जानकारी आखिरी बार 8.8.2022 को दी गयी थी। अब सारे उत्तर एनसीआरबी डेटा की तरफ इशारा करते हैं जिसमें अपराधों का ब्यौरा रखा जाता है।

एनसीआरबी ने साल 2014 में बाल मजदूरी कानून के तहत 147 मामलों की जानकारी दी थी। इनमें से 26 प्रतिशत मामले प्रवासी बाल मज़दूरों के थे। 2016 के बाद एनसीआरबी ने प्रवासी बाल मज़दूरों के बारे में अलग से आंकड़े मुहैया कराना बंद कर दिया है।

लोक सभा में अतारांकित प्रश्न संख्या 1225 के जवाब के अनुसार 2019-20 (दिसंबर 2020 तक) में रिहा कराये गये बाल मज़दूरों की संख्या 40,050 थी। इसके विपरीत एनसीआरबी डेटा के मुताबिक 2019 में केवल 770 और 2020 में केवल 476 मामले दर्ज किए गए थे।

प्रवासी/असंगठित क्षेत्र मज़दूरों को राशन कार्ड मुहैया कराए जाएं: सर्वोच्च न्यायालय का आदेश (20 अप्रैल 2023)

रोज़ी रोटी अधिकार अभियान

ईमैल: righttofoodindia@gmail.com | वेब: www.righttofoodcampaign.in

मोबाईल - 7985946875, 8527359760, दूरभाष - 91 -11 - 41613468

1 मई 2023

रोज़ी रोटी अधिकार अभियान प्रवासी/असंगठित श्रमिकों को राशन कार्ड प्रदान करने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश का स्वागत करता है

रोज़ी रोटी अधिकार अभियान ई-श्रम पोर्टल के तहत पंजीकृत प्रवासी/असंगठित श्रमिकों को राशन कार्ड प्रदान करने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश का स्वागत करता है। सुप्रीम कोर्ट ने 20 अप्रैल, 2023 को एमए 94/2022 में 'प्रवासी मज़दूरों की समस्या और दुख' के एक आदेश में प्रवासी श्रमिकों और असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु महत्वपूर्ण निर्देश दिए हैं। ई-श्रम पोर्टल पर 28.60 करोड़ प्रवासी/असंगठित श्रमिक पंजीकृत हैं, जिनमें से 20.63 करोड़ राशन कार्ड डेटा पर पंजीकृत हैं। यह आदेश सभी राज्य/केंद्र शासित प्रदेशों की सरकारों को एनएफएसए के तहत उन 8 करोड़ लोगों को राशन कार्ड जारी करने का निर्देश देता है, जो ई-श्रम पोर्टल पर पंजीकृत हैं, लेकिन उनके पास राशन कार्ड नहीं हैं। राशन कार्ड के बिना बड़ी संख्या में प्रवासी/असंगठित मज़दूर या उसके परिवार के सदस्य राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत योजनाओं के लाभ से वंचित रह गये हैं.

एनएफएसए को नवीनतम प्रकाशित जनगणना के आंकड़ों के अनुसार कवरेज को अद्यतन करने की आवश्यकता है परन्तु 2021 की जनगणना को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया गया है और इसके प्रकाशन के संबंध में कोई तिथि अधिसूचित नहीं की गई है, जिसके कारण 10 करोड़ से अधिक लोगों को राशन कार्ड के अभाव में खाद्य सुरक्षा तंत्र के दायरे से बाहर रखा गया है।

आदेश का प्रासंगिक भाग नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है -

> "... ई-श्रम पर 28.60 पंजीकरणकर्ताओं में से 20.63 करोड़ राशन कार्ड डेटा पर पंजीकृत हैं। इसका मतलब यह है कि ई-श्रम पर बाकी पंजीकरणकर्ता अभी भी बिना राशन कार्ड के हैं। बिना राशन कार्ड के कोई प्रवासी/असंगठित मज़दूर या उसके परिवार के सदस्य राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत योजनाओं के लाभ से वंचित हो सकते हैं। इसलिए, एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते, यह देखना संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेश का कर्तव्य है कि ई-श्रम पर शेष पंजीकरणकर्ता, जो अभी भी राशन कार्ड डेटा पर पंजीकृत नहीं हैं और जिन्हें राशन कार्ड जारी नहीं किए गए हैं, उन्हें राशन कार्ड जारी किए जाएं और राशन कार्ड जारी करने की कवायद में तेजी लाने की ज़रूरत है। जैसा कि भारत संघ और संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेश के पास पहले से ही ई-श्रम पोर्टल पर पंजीकरण कराने वालों का डेटा है और आवश्यक जानकारी होगी, राज्य/केंद्र शासित प्रदेश उन तक पहुंचेंगे ताकि उन्हें राशन कार्ड जारी किए जा सकें और उनके नाम राशन कार्ड के डाटा में दर्ज हैं।
>
> 6. वर्तमान में, हम संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेश को ई-श्रम पोर्टल पर छूटे हुए पंजीकरणकर्ताओं को राशन कार्ड जारी करने की कवायद करने के लिए व्यापक प्रचार करके और संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेश में ज़िले के संबंधित कलेक्टर कार्यालय के माध्यम सेको उनसे संपर्क करने के लिए तीन महीने का और समय देते हैं ताकि ई-श्रम पोर्टल पर अधिक से अधिक पंजीकरण कराने वालों को राशन कार्ड जारी किए जा सकें और उन्हें भारत सरकार और राज्य सरकार द्वारा जारी की गई कल्याणकारी योजनाओं का लाभ मिल सके, जिसमें राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम स्तर का लाभ भी शामिल है। हम उसी के अनुसार आदेश देते हैं।"

रोज़ी रोटी अधिकार अभियान मांग करता है:

- सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार 8 करोड़ प्रवासी/असंगठित क्षेत्र के कामगार जो ई-श्रम पर पंजीकृत हैं, लेकिन उनके पास राशन कार्ड नहीं है उनके राशन कार्ड जारी करने की कवायद तुरंत शुरु करनी चाहिए।

- सरकारों को सभी प्रवासी/असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए पीडीएस तक पहुंच को सार्वभौमिक बनाना चाहिए और किसी भी आय मानदंड सहित बहुसंख्यक और जटिल समावेशन/बहिष्करण वाले मानदंडों को लागू किए बिना राशन कार्ड प्रदान करना चाहिए। जटिल मानदंडों को अपनाने से लोग बाहर हो जाते हैं क्योंकि वे अक्सर निवास प्रमाण, आधार कार्ड, बिजली बिल आदि सहित आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करने में असमर्थ होते हैं। ये व्यक्ति समाज के सबसे आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों में से हैं और इन्हें एनएफएसए के दायरे में अवश्य शामिल किया जाना चाहिए।

अजमेर और भीलवाड़ा (राजस्थान) तथा सुरीर (मथुरा, उत्तर प्रदेश) के 30 ईंट भट्टों में काम करने वाले मज़दूरों और उनके बच्चों का ब्यौरा

गंतव्य क्षेत्र / स्थान	अक्टूबर 2022 से जून 2023 के बीच भट्टे पर आये परिवारों की संख्या	परिवार के सदस्यों की संख्या
अजमेर	513	2105
भीलवाड़ा	303	1569
सुरीर	392	1798

अजमेर के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग जगह से आये ईंट मज़दूरों की संख्या

स्रोत क्षेत्र	भराई	निकासी	पथाई	रापिश	ट्रैक्टर चालक	भट्टा मुनीम	कच्ची ईंटों की ढुलाई	जलाई	अन्य काम	कुल
छत्तीसगढ़	0	0	301	0	0	0	0	1	2	304
ओडिशा	0	0	4	0	0	0	0	0	0	4
राजस्थान	30	46	23	2	3	5	1	1	10	121
उत्तर प्रदेश	0	5	78	1	0	0	0	0	0	84
कुल	**30**	**51**	**406**	**3**	**3**	**5**	**1**	**2**	**12**	**513**

भीलवाड़ा के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग इलाकों से आये मज़दूरों की संख्या

स्रोत क्षेत्र	भराई	निकासी	पथाई	रापिश	ट्रैक्टर चालक	भट्टा मुनीम	कच्ची ईंटों की ढुलाई	जलाई	अन्य काम	कुल
बिहार	0	0	171	0	0	0	0	8	0	179
झारखंड	0	0	5	0	0	0	0	0	0	5
मध्य प्रदेश	0	0	6	0	0	0	0	0	0	6
राजस्थान	28	10	4	1	0	0	0	6	0	49
उत्तर प्रदेश	2	1	58	0	0	0	0	3	0	64
कुल	**30**	**11**	**244**	**1**	**0**	**0**	**0**	**17**	**0**	**303**

सुरीर के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग इलाकों से आये मज़दूरों की संख्या

स्रोत क्षेत्र	भराई	निकासी	पथाई	रापिश	ट्रैक्टर चालक	भट्टा मुनीम	कच्ची ईंटों की ढुलाई	जलाई	अन्य काम	कुल
बिहार	0	0	288	0	0	0	0	0	0	288
हरियाणा	0	0	1	0	0	0	0	0	0	1
झारखंड	0	0	1	0	0	0	0	0	0	1
मध्य प्रदेश	0	0	9	0	0	0	0	0	0	9
उत्तर प्रदेश	1	0	92	0	0	0	0	0	0	93
कुल	**1**	**0**	**391**	**0**	**0**	**0**	**0**	**0**	**0**	**392**

सूचना: ये सभी आंकड़े अजमेर, भीलवाड़ा और सुरीर में स्थित 30 ईंट भट्टों के हैं जहां सेंटर फॉर लेबर रिसर्च ऐंड एक्शन (सीएलआरए), सेंटर फॉर एजुकेशन ऐंड कम्युनिकेशन (सीईसी) द्वारा ईंट भट्टा मज़दूरों और उनके बच्चों की खाद्य सुरक्षा व अधिकारों के लिए परियोजना चलाई जा रही है।

अजमेर के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग इलाकों से आये ईंट मज़दूरों का जाति एवं व्यवसाय के अनुसार विवरण										
स्रोत क्षेत्र	**भराई**	**निकासी**	**पथाई**	**रापिश**	**ट्रैक्टर चालक**	**भट्टा मुनीम**	**कच्ची ईंटों की ढुलाई**	**जलाई**	**अन्य काम**	**कुल**
अनुसूचित जाति (अजा)	6	6	188	1	0	0	0	2	1	204
अनुसूचित जनजाति (अजजा)	18	38	131	1	2	4	1	0	9	204
अन्य पिछड़े वर्ग (ओबीसी)	6	7	84	1	1	1	0	0	2	102
सामान्य	0	0	3	0	0	0	0	0	0	3
कुल	**30**	**51**	**406**	**3**	**3**	**5**	**1**	**2**	**12**	**513**
भीलवाड़ा के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग इलाकों से आये ईंट मज़दूरों का जाति एवं व्यवसाय के अनुसार विवरण										
स्रोत क्षेत्र	**भराई**	**निकासी**	**पथाई**	**रापिश**	**ट्रैक्टर चालक**	**भट्टा मुनीम**	**कच्ची ईंटों की ढुलाई**	**जलाई**	**अन्य काम**	**कुल**
अनुसूचित जाति (अजा)	6	3	68	0	0	0	0	0	0	77
अनुसूचित जनजाति (अजजा)	11	6	137	1	0	0	0	8	0	163
अन्य पिछड़े वर्ग (ओबीसी)	12	2	39	0	0	0	0	6	0	59
सामान्य	1	0	0	0	0	0	0	1	0	2
अन्य अल्पसंख्यक	0	0	0	0	0	0	0	2	0	2
कुल	**30**	**11**	**244**	**1**	**0**	**0**	**0**	**17**	**0**	**303**
सुरीर के 10 ईंट भट्टों में अलग-अलग इलाकों से आये ईंट मज़दूरों का जाति एवं व्यवसाय के अनुसार विवरण										
स्रोत क्षेत्र	**भराई**	**निकासी**	**पथाई**	**रापिश**	**ट्रैक्टर चालक**	**भट्टा मुनीम**	**कच्ची ईंटों की ढुलाई**	**जलाई**	**अन्य काम**	**कुल**
अनुसूचित जाति (अजा)	0	0	290	0	0	0	0	0	0	290
अनुसूचित जनजाति (अजजा)	0	0	58	0	0	0	0	0	0	58
अन्य पिछड़े वर्ग (ओबीसी)	1	0	43	0	0	0	0	0	0	44
सामान्य	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
कुल	**1**	**0**	**391**	**0**	**0**	**0**	**0**	**0**	**0**	**392**

गंतव्य क्षेत्र	राशन कार्ड धारक ईंट भट्टा मज़दूर परिवारों का प्रतिशत	भट्टे पर राशन कार्ड लेकर आये मज़दूर परिवारों का प्रतिशत
अजमेर	66%	31%
भीलवाड़ा	65%	47%
सुरीर	54%	31%

गंतव्य क्षेत्र	आधार कार्ड धारक ईंट भट्टा मज़दूर परिवारों का प्रतिशत	भट्टे पर आधार कार्ड लेकर आये मज़दूर परिवारों का प्रतिशत
अजमेर	46%	45%
भीलवाड़ा	23%	67%
सुरीर	35%	34%

गंतव्य क्षेत्र	कितने प्रतिशत वयस्क मज़दूरों के पास ई-श्रम कार्ड है	कितने प्रतिशत लोगों के पास बैंक खाता है	कितने प्रतिशत लोगों को किसी योजना का लाभ मिल रहा है
अजमेर	17%	20%	39%
भीलवाड़ा	10%	12%	20%
सुरीर	11%	16%	28%

ईंट मज़दूरों के बच्चों की पढ़ाई-लिखाई - आयु और क्षेत्र अनुसार विवरण												
गंतव्य क्षेत्र	फिलहाल स्कूल में दाखिला है				पढ़ाई छोड़ चुके				कभी स्कूल नहीं गये			
	4 से 10 वर्ष	11 से 14 वर्ष	15 से 18 वर्ष	कुल	4 से 10 वर्ष	11 से 14 वर्ष	15 से 18 वर्ष	कुल	4 से 10 वर्ष	11 से 14 वर्ष	15 से 18 वर्ष	कुल
अजमेर	97	62	15	174	13	16	12	41	306	84	103	493
भीलवाड़ा	42	23	9	74	23	12	4	39	342	74	71	487
सुरीर	66	35	0	101	53	37	25	115	274	87	75	436
कुल	**205**	**120**	**24**	**349**	**89**	**65**	**41**	**195**	**922**	**245**	**249**	**1416**

ईंट मज़दूरों के बच्चों का शैक्षिक स्तर						
आयु वर्ग	ऐसे बच्चे जो कभी स्कूल जा चुके हैं	कक्षा 1-5	कक्षा 6-8	कक्षा 9-10	कक्षा 11-12	स्नातक
4 से 10 वर्ष	294	97%	3%	0%	0%	0
11 से 14 वर्ष	185	60%	37%	3%	0%	0
15 से 18 वर्ष	65	51%	35%	12%	2%	0
कुल	**544**	**79%**	**18%**	**3%**	**0%**	**0**

स्कूल छोड़ने वाले बच्चों का आयु और कक्षा अनुसार विवरण						
आयु वर्ग	पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की संख्या	कक्षा 1-5	कक्षा 6-8	कक्षा 9-10	कक्षा 11-12	स्नातक
4 से 10 वर्ष	89	96%	4%	0%	0%	0%
11 से 14 वर्ष	65	68%	32%	0%	0%	0%
15 से 18 वर्ष	41	54%	32%	12%	2%	0%
कुल	**195**	**77%**	**19%**	**3%**	**1%**	**0%**

ज़मीनी हक़ीकत: अधिकारों और लाभों तक पहुँच में सुधार

भ्रष्ट स्वास्थ्य व्यवस्था और कर्मचारी महिलाओं को संस्थागत प्रसव का विकल्प चुनने से हतोत्साहित कर सकता है...

पूनम देवी बिहार के नवादा ज़िले की रहने वाली है। वह मज़दूरी के लिए सुरीर के देविका ईंट भट्टे में काम करती है। वह अपने पति, दो साल के बच्चे और अपनी सास के साथ रहती है। भट्टे में आने के कुछ महीने बाद वह गर्भवती हो गई।

तब वह अपने परिवार के लोगों के साथ सीईसी की सेंटर कोऑर्डिनेटर से जाकर मिली जो उस समय अपनी टीम के साथ भट्टे में घरेलू सर्वेक्षण कर रही थी। पूनम ने उनको अपनी गर्भावस्था के बारे में बताया। उसी समय पूनम की सास ने ये भी कहा कि वो नहीं चाहती कि पूनम अस्पताल में बच्चे को जन्म दे। टीम को ये जानकर हैरानी हुई। जब पूनम की सास से पूछा गया कि वो अस्पताल जाने से क्यों कतरा रही हैं तो सास ने कोई जवाब नहीं दिया और उठकर चली गयी।

फील्ड टीम ने कुछ समय बाद पूनम की सास से फिर बात की। तब उन्होंने बताया कि अलीगढ़ में उनके साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया गया था। उन्होंने बताया कि पूनम ने वहां के सरकारी अस्पताल में एक स्वस्थ बेटे को जन्म दिया था। उसी दिन पूनम की सास ने एक डॉक्टर को किसी से बात करते हुए सुना जो पूनम के बेटे को बेचने की बात कर रहा था। पूनम का पति और और पूनम की सास उस डॉक्टर से बात करने भी गये। तब डॉक्टर ने उन लोगों को धमकी दी कि इस बारे में किसी को कुछ बताया तो उनको जान से मरवा देगा। उसने इन लोगों को पैसा भी दिया। इसके बाद उन्होंने फौरन अलीगढ़ छोड़ दिया और वे अपने गांव लौट गये। अब कई साल बाद वे फिर से देविका भट्टे में आये हैं।

उनकी कहानी सुनकर सेंटर फेसिलिटेटर ने आश्वासन दिया कि इस बार वे ऐसा कुछ नहीं होने देंगी और पूनम अस्पताल में ही बच्चा पैदा करेगी। शुरू में तो पूनम की सास तैयार नहीं हुई मगर थोड़ा समझाने पर उसने बात मान ली। सीईसी की टीम के लोग डिलीवरी के समय पूनम के साथ अस्पताल गये और 28 फरवरी 2023 को पूनम ने सुरीर के प्राइमरी हेल्थ सेंटर में अपने दूसरे बेटे को जन्म दिया।

बुधनी और उसके पेट में पल रहे भ्रूण को जीवित रखने के लिए चढ़ाना पड़ा पांच यूनिट खून!

बुधनी देवी मूल रूप से बिहार के जमुई ज़िले की रहने वाली है। वह सात महीने से गर्भवती है। महिलाओं की एक मीटिंग के दौरान भट्टों में सीएलआरए द्वारा चलाये जा रहे बाल स्वास्थ्य एवं पोषण केंद्र (चाइल्ड हेल्थ ऐंड न्यूट्रीशन सेंटर - सीएचएनसी) की सेंटर फेसिलिटेटर ने देखा कि बुधनी देवी के शरीर पर सूजन आ गयी है। बुधनी देवी से बात करने पर पता चला कि उसे हमेशा थकान और कमजोरी महसूस होती है। उसने पास में ही डॉक्टर की एक दुकान पर जाकर भी दिखाया था और दवाइयां भी खायी थीं मगर उससे कोई फायदा भी नहीं हुआ।

सेंटर फेसिलिटेटर ने इस बारे में ब्लॉक कोऑर्डिनेटर पूजा से बात की। इसके बाद वे लोग बुधनी देवी को मंडल अस्पताल लेकर गए जहां मालूम पड़ा कि बुधनी देवी के शरीर में केवल 3.7 किलोग्राम खून बाकी बचा है और वह एनीमिया से पीड़ित है। यानी उसके शरीर में खून की भारी कमी थी। डॉक्टर ने उसे भीलवाड़ा अस्पताल जाने को कहा। उसकी हालत गंभीर थी इसलिए उसे फौरन अस्पताल में दाखिल कराया गया। उसे फौरन खून की ज़रूरत थी इसलिए सेंटर फेसिलिटेटर खुद अस्पताल के ब्लड बैंक गयी। वहां भी स्टाफ ने खून देने से इनकार कर दिया और कहा कि वे तभी खून दे सकते हैं जब कोई और व्यक्ति खून देने को तैयार हो।

जब सीएलआरए की साथियों ने बताया कि वे प्रवासी मज़दूरों के बीच सीएलआरए के प्रोजेक्ट के अंतर्गत क्या काम करती हैं तो अस्पताल के कर्मचारियों ने एक यूनिट खून दे दिया मगर स्टॉक कम होने की वजह से वे ज़्यादा खून नहीं दे पाये। बुधनी देवी के इलाज के लिए कम से कम पांच यूनिट खून की ज़रूरत थी।

तब सीएलआरए की टीम ने दूसरे संगठनों से संपर्क किया और उनके सहयोग से टीम ज़रूरी मात्रा में खून का इंतज़ाम करने में कामयाब रही। पांच दिन बाद बुधनी देवी को अस्पताल से छुट्टी मिली। भट्टे पर लौटने के बाद सेंटर फेसिलिटेटर ने लगातार उसकी हालत पर नज़र रखी। सेंटर फेसिलिटेटर उसको अच्छी खुराक और आयरन-कैल्शियम की गोलियां भी देती रहीं। बुधनी देवी और उनके पति ने सीएलआरए की टीम का आभार व्यक्त किया। उसके पति ने कहा कि अगर सीएलआरए की टीम नहीं होती तो उसकी बीवी और बच्चे का बचना मुश्किल था।

गंतव्य क्षेत्र	भट्टों पर गर्भवती महिलाओं का प्रतिशत
अजमेर	20%
भीलवाड़ा	26%
सुरीर	23%

ज़मीनी हक़ीकत: अधिकारों और लाभों तक पहुँच में सुधार

महिलाओं की सुरक्षा: भट्टों में महिला सहायता समितियों की ज़रूरत

सेंटर फॉर लेबर रिसर्च ऐंड ऐक्शन (सीएलआरए) ने भट्टों में काम करने वाली महिला मज़दूरों के कल्याण के लिए और उनके साथ होने वाली हिंसा या उत्पीड़न की रोकथाम के लिए महिला सहायता समितियों का गठन किया है। इस कमेटी की सदस्याएं खुद इन भट्टों की मज़दूर होती हैं। चाइल्ड हेल्ड ऐंड न्यूट्रीशन सेंटर (सीएचएनसी) के कमरे में सेंटर फेसिलिटेटर की मौजूदगी में इस समिति की मीटिंगें होती हैं। यहां औरतों की जिंदगी से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की जाती है ओर उनके समाधान ढूंढे जाते हैं। ऐसा ही एक मामला कुछ इस प्रकार है...

सीता (बदला हुआ नाम) की उम्र 27 साल है। वह अपने पति लखन (बदला हुआ नाम) के साथ जेएमडी लाडपुरा ईंट भट्टे में काम करते हैं। ये लोग छत्तीसगढ़ के महासमंद ज़िले के परीहापल्ली गांव से यहां आये हैं। 3 जनवरी 2023 को सीता ने गंगवाना के सीएमसी अस्पताल में अपनी नसबंदी करायी थी जिसकी वजह से पति-पत्नी कुछ दिन तक भट्टे में काम नहीं कर पाये थे। उन्होंने अस्पताल के खर्चे के लिए भी भट्टा मालिक से 1000 रूपये उधार लिए थे। 11 जनवरी को समिति की एक सदस्य सीता के टांके कटवाने के लिए उसे अस्पताल लेकर गयी। वहां सीता को प्रोत्साहन राशि के रूप में 2000 रूपये मिले। राजस्थान में सरकार नसबंदी कराने वाली औरतों को 2000 रूपए और नसबंदी कराने वाले पुरुषों को 3000 रूपये की प्रोत्साहन राशि देती है।

सीता के पति को शराब की लत है। 12 जनवरी 2023 की दोपहर को जब सीता ने अपने पति को कुछ आदमियों के साथ शराब पीते देखा तो उसने पति से कहा कि वह फौरन घर आकर खाना खाए। लखन नशे में धुत था। वह चलने की हालत में भी नहीं था। तब सीता उसका हाथ पकड़कर उठाने लगी। इस पर लखन को गुस्सा आ गया और वह वहीं सीता को पीटने लगा। उसने ठीक वहीं लातें मारीं जहां सीता को टांके लगे थे जो अभी भरे भी नहीं थे। उसने सीता का गला घोंटने की भी कोशिश की। सीता की चीख-पुकार और शोर-शराबा सुनकर पड़ोसी बाहर आये। जैसे-तैसे उन्होंने सीता को लखन के पंजे से छुड़ाया। सीता की गर्दन पर अच्छी-खासी चोट आयी। शाम को इन महिलाओं ने समिति की सदस्याओं को इस घटना के बारे में बताया। उन्होंने ये तय किया कि इस मामले में सभी मिलकर दखल दें वरना लखन फिर से सीता की पिटाई करेगा। अगले दिन सेंटर फेसिलिटेटर के साथ ये महिलाएं सीता के घर गयीं और उन्होंने पति-पत्नी से इस घटना के बारे में बात की और लखन को चेतावनी दी कि वह दोबारा ऐसा न करे वरना वे उसके खिलाफ थाने में एफआईआर दर्ज करा देंगी।

सेंटर फेसिलिटेटर ने भी उन्हें समझाया कि मिल कर साथ रहने के क्या फायदे हैं। उन्होंने ये भी बताया कि इस तरह की मार-पिटाई से बच्चों पर भी बहुत बुरा असर पड़ता है। आखिरकार दोनों के बीच सुलह हो गयी और लखन ने वादा किया कि आगे से वह मारपीट नहीं करेगा। कमेटी की सदस्याओं द्वारा फौरन मिली सहायता से सीता को राहत मिली। इसके बाद अभी तक सीता के साथ ऐसी कोई मारपीट नहीं हुई है और कमेटी को उम्मीद है कि भविष्य में भी ऐसा नहीं होगा।

महिला समिति की बैठक

कुछ दिलचस्प बातें!
ज़मीनी हक़ीकत: अधिकारों और लाभों तक पहुँच में सुधार

विचारों का आदान-प्रदान भी बहुत होता है: भीलवाड़ा के भट्टा मज़दूरों के लिए नाश्ता बना रोज़ाना की हक़ीकत

एक भोज उत्सव के दौरान सीएलआरए की टीम ने मज़दूरों को बताया कि वे नाश्ते में और शाम को किस तरह की स्वस्थ, सेहतमंद आहार खा सकते हैं क्योंकि वहां बहुत सारे मज़दूर काम के बोझ की वजह से अकसर नाश्ता किए बिना ही काम पर निकल जाते थे। टीम के सदस्यों ने बताया कि मज़दूरों को अंकुरित काला चना, सोयाबीन और मूंग जैसी ताकत देने वाले आहार का सेवन करना चाहिए। इस तरह के आहार को आसानी से तैयार भी किया जा सकता है।

मज़दूरों को बताया गया कि अगर वे सुबह-सवेरे फटाफट कुछ नहीं पका सकते तो उन्हें रात को थोड़े से चने भिगोकर रख देने चाहिए और सुबह नाश्ते में उन्हीं को खाना चाहिए। चाहें तो उन्हें उबाल कर या भूनकर भी खा सकते हैं। इस घटना के एक-डेढ़ हफ्ते बाद कई भट्ठों के सेंटर फेसिलिटेटर्स ने पाया कि अब कई मज़दूर सुबह पोटली में अंकुरित चना लाने लगे थे। वे पसार में या किसी पेड़ के नीचे बैठे अंकुरित चना खाते दिखाई देते थे। बच्चे भी अंकुरित चना खाने लगे थे।

ये नन्हा सा प्रयोग भीलवाड़ा के भट्ठों में बड़ा कारगर और कामयाब साबित हुआ।

बचे हुए भोजन का पुनः उपयोग

सीएलआरए ने पोषाहार की दिशा में एक नया कार्यक्रम शुरू किया है। इसके लिए सीएलआरए के साथी महिलाओं को बताते हैं कि वे अपने बचे हुए खाने का किस तरह सदुपयोग कर सकती हैं। इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि मज़दूरों के पास जो कुछ भी साधन उपलब्ध हैं उनका बेहतरीन इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है और, गैर-ज़रूरी खर्चों से कैसे बचा जा सकता है ताकि परिवार कुपोषण, खून की कमी और कमज़ोरी की समस्या से बच सके।

मुकेश और शोभा रूपमगढ़ के रहने वाले हैं। वे अजमेर के भरत लोहागल भट्टे में काम करते हैं। उनके तीन बच्चे हैं। वे भी मां-बाप के साथ भट्टे पर जाते हैं। शोभा घर का काम संभालती है और मुकेश भट्टे पर ट्रैक्टर चलाता है। मुकेश के काम की पाली कभी तय नहीं होती। भट्टे पर कभी भी ट्रैक्टर की ज़रूरत पड़ जाती है इसलिए उसको कभी भी काम पर बुला लिया जाता है। इसी वजह से शोभा एक ही बार में सबके लिए खूब सारा खाना बना लेती थी। दोपहर और रात में सभी लोग उसी खाने को खाते थे। मगर अकसर ये देखा गया कि रात के खाने के बाद जो खाना बच जाता था उसे वह फेंक देती थी। खाने की बर्बादी की ये आदत दूसरे भट्टों के परिवारों में भी दिखायी दी। जब शोभा से पूछा गया कि वो ऐसा क्यों करती है तो शोभा और दूसरी महिलाओं ने बताया कि उनके पति और बच्चे पूरे दिन एक जैसा खाना नहीं खाना चाहते इसलिए उन्हें बचा हुआ खाना फेंकना पड़ता है।

“बच्चे और पति एक ही खाना दोबारा नहीं खाना चाहते। काम भी करना होता है इसलिए मैं एक ही बार में खाना बनाकर चली जाती हूं। लेकिन सब फिक जाता है।”

खाने की इस बर्बादी को रोकने के लिए सेंटर फेसिलिटेटर्स ने बासी खाने से नए और सेहतमंद व्यंजन बनाने के तरीक़े निकालना शुरू किया। ज़ाहिर है कि ये सभी परिवार बहुत ग़रीब हैं। उनके पास बहुत मामूली संसाधन हैं। कई बार समय पर वेतन न मिल पाने से खाने के भी लाले पड़ जाते हैं। इस तरह के अभाव के हालात में खाने की बर्बादी एक बहुत बड़ी समस्या है जिस पर फौरन ध्यान दिया जाना चाहिए। इसलिए इन संसाधनों के बेहतरीन इस्तेमाल का कोई न कोई तरीक़ा ढूंढना ज़रूरी था।

शोभा (30 वर्ष) को सिखाया गया कि बची दाल से किस तरह भरवां परांठा बना सकती है। इसके लिए बासी दाल, आटे, हरे धनिये, नमक, हरी मिर्च, प्याज़, हींग और तेल की ज़रूरत पड़ती है।

जब शोभा ने ये परांठे बनाए तो वे सभी को बहुत पसंद आये। इससे बासी खाने की समस्या भी खत्म हो गयी और एक नए क़िस्म का ज़ायका भी मिला। अब शोभा अपने पति और बच्चों के लिए ज़्यादा अच्छा और पोषक भोजन तैयार कर पाती है। ये नाश्ते के तौर पर भी बढ़िया है और खाने की बर्बादी का भी बढ़िया इलाज है।

दाल का परांठा एक बढ़िया पोषक आहार है। इसमें भरपूर प्रोटीन भी होता है और रेशा भी। इसको खाने के बाद जल्दी भूख नहीं लगती।

कुछ दिलचस्प बातें!
ज़मीनी हक़ीकत: अधिकारों और लाभों तक पहुँच में सुधार

भोज उत्सव में मर्दों की हिस्सेदारी

अक्टूबर 2022 में जब सुरीर के माधव ईंट भट्टे में मज़दूर आने लगे तो सीईसी की टीम ने वहां जाकर इन परिवारों का सर्वेक्षण किया। इस सीज़न में ज़्यादातर परिवार बिहार से आये थे। सर्वेक्षण के दौरान इन परिवारों ने सीईसी के कामकाज में काफी दिलचस्पी और उत्सुकता दिखायी। लिहाज़ा, उनको सारी जानकारी दी गयी। उनको भट्टों में आयोजित होने वाले भोज उत्सवों के बारे में भी जानकारी दी गयी।

पिछले सीज़न के दौरान भोज उत्सवों में मर्दों की सहभागिता औरतों के मुकाबले बहुत कम थी। औरतें और किशोरियां सब्ज़ियाँ काट रही थीं, सब्ज़ियाँ पका रही थीं, सबको खाना परोस रही थीं। मर्द और लड़के बस खाना परोसने में कभी-कभी उनकी मदद कर देते थे। कुल मिलाकर उन्होंने खाना तैयार करने की पूरी प्रक्रिया में कोई खास दिलचस्पी नहीं दिखायी। सीईसी द्वारा भट्टे में शुरू किये गये सीएचएनसी (सेंटर) की फेसिलिटेटर ने महसूस किया कि मर्दों को भी ये समझना चाहिए कि औरतों को कितनी ज़्यादा मेहनत करनी पड़ती है। वे घर का काम भी करती हैं, बच्चों को संभालती हैं और भट्टे पर भी मज़दूरी करती हैं। इसलिए मर्दों को ये एहसास कराना ज़रूरी था कि वे भी अपनी पत्नियों, बहनों और बेटियों की मदद करें, उनके काम में हाथ बंटाएं ताकि उनको भी दिन की थकान से कुछ राहत मिले।

इस साल सीईसी की टीम ने तय किया कि भोज उत्सव में औरतों और लड़कियों के साथ ज़्यादा से ज़्यादा पुरुषों और लड़कों की भी हिस्सेदारी होनी चाहिए। माधव ईंट भट्टे के सेंटर फेसिलिटेटर ने भट्टे के मर्दों और लड़कों के साथ एक मीटिंग की और उनको भी भोज उत्सव की तैयारी और आयोजन में ज़िम्मेदारी निभाने के लिए प्रोत्साहित किया। इसके जवाब में न केवल लोगों ने दिलचस्पी दिखायी बल्कि भोज उत्सव में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया, सारी गतिविधियों का कार्यभार संभाला, सब्जियां काटीं और खाना पकाया। पुरुषों और महिलाओं द्वारा मिलकर पूरे उत्सव को चलाने का यह दृश्य सभी के लिए बहुत उत्साह और हिम्मत बढ़ाने वाला अनुभव था।

विशेषज्ञों की नजर से ...

अंतर्राज्यीय प्रवासी श्रमिक (रोज़गार एवं सेवा परिस्थिति नियमन) कानून, 1979 को लागू करने में इतनी ढिलाई क्यों?

अंतर्राज्यीय प्रवासी श्रमिक (रोज़गार एवं सेवा परिस्थिति नियमन) कानून, 1979 जैसे कानूनों के बावजूद प्रवासी मज़दूरों को कोई राहत मिलती दिखायी नहीं देती। इस समस्या को समझने के लिए हमने श्री चंदन कुमार से बात की जो वर्किंग पीपुल्स कोअलिशन (डब्ल्यूपीसी) से जुड़े हैं। यह अनौपचारिक क्षेत्र मज़दूरों के 150 से अधिक प्रांतीय, स्थानीय संगठनों और हम्माल पंचायत, पुणे, महाराष्ट्र का एक नेटवर्क है। उनसे बात कर रही हैं भारती अली।

भारती अली: आपने अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर कानून पर बात करने के लिए इतना समय निकाला, इसके लिए हम आपके आभारी हैं। हालांकि हमारे ज्यादातर पाठक आपको जानते होंगे, मगर मैं चाहूंगी कि एक बार फिर आप अपने बारे में कुछ बताएं। इसके बाद मैं आपसे कुछ सवाल पूछूंगी।

चंदन कुमार: जी, आपका भी शुक्रिया। मेरा नाम चंदन कुमार है और मैं एक ट्रेड यूनियन ऑर्गनाइज़र और ऐक्टिविस्ट हूं। मैं मोटे तौर पर अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में काम करने वाले मज़दूरों के बीच काम करता हूं। मैं हम्माल पंचायत यूनियन से जुड़ा हूं। यह पुणे (महाराष्ट्र) में सक्रिय यूनियन है। हमारी यूनियन ने अनौपचारिक मज़दूरों के लिए सबसे ज़्यादा समग्र सामाजिक सुरक्षा का लक्ष्य हासिल किया है। आइएलो और भारत सरकार की रिपोर्टों, राष्ट्रीय श्रम आयोग, अर्जुनसिंह गुप्ता कमीशन रिपोर्ट वगैरह के साथ-साथ दुनिया के बाकी देशों में भी इस मॉडल की चर्चा और सराहना की जा रही है। इसके अलावा मैं वर्किंग पीपुल्स कोअलिशन का ऑर्गनाइज़िंग सेक्रेटरी भी हूं। यह वर्किंग पीपुल्स कोअलिशन (डब्ल्यूपीसी) मज़दूरों के संगठनों को एकजुट करने, मज़दूरों के मुद्दों पर एक साझा न्यूनतम कार्यक्रम तैयार करने की एक बहुत महात्वाकांक्षी कोशिश है। किसी भी तरह के राजनीतिक विचार रखने वाले संगठन और आंदोलन मज़दूरों के एजेंडा पर काम करने के लिए डब्ल्यूपीसी के मंच से जुड़ सकते हैं। मैं दो संगठनों का सदस्य हूं और मैं इस कोअलिशन को खड़ा करने में भी हिस्सेदार रहा हूं। मैं नीतियों के स्तर पर काम करने वाला व्यक्ति हूं। मैं भारत सरकार की विभिन्न समितियों का सदस्य रह चुका हूं। इस समय मैं भारत सरकार के न्यूनतम मज़दूरी सलाहकार बोर्ड का सदस्य हूं जोकि न्यूनतम मज़दूरी तय करने वाली सबसे ऊंची निर्णयकारी संस्था है। इसके अलावा मैं प्रवासी मज़दूरों, घरेलू मज़दूरों, निर्माण मज़दूरों आदि से संबंधित समितियों में भी काम कर चुका हूं।

भारती अली: बातचीत की पृष्ठभूमि स्पष्ट करने के लिए मैं आपको बताना चाहती हूं कि हम प्रवासी मज़दूरों, खासतौर से भट्टों पर आने वाले प्रवासी मज़दूरों के बच्चों के लिए पोषण, स्वास्थ्य, कल्याण, सम्मान और अन्य अधिकारों की बहाली की परियोजना पर काम कर रहे हैं। ये परियोजना राजस्थान के भीलवाड़ा और अजमेर जिलों में तथा उत्तर प्रदेश के मथुरा ज़िले में स्थित सुरीर के इलाके में चलायी जा रही है। हमें सबसे ज़्यादा परेशानी इस सवाल से है कि अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर कानून का कहीं भी इस्तेमाल क्यों नहीं किया जा रहा है। हमारे पास भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर कानून भी हैं। भट्टा मज़दूरों को तो इसमें से किसी कानून का फ़ायदा नहीं मिलता। लिहाज़ा, पहले आप अंतर्राज्यीय प्रवासी श्रमिक कानून (इसमा) को समझने में हमारी मदद करें। इसके बाद हम इसके क्रियान्वयन से संबंधित दूसरे सवालों पर आगे बढ़ेंगे।

चंदन कुमार: एक लेबर ऑर्गनाइज़र, एक लेबर रिसर्चर और एक लेबर ऐक्टिविस्ट के तौर पर किसी भी कानून के बारे में बात करने से पहले मैं उस कानून का इतिहास और पृष्ठभूमि को समझने में विश्वास रखता हूं। हमें किसी कानून के बनने के दौरान अलग-अलग पक्षों के बीच हुई चर्चाओं और परामर्श को समझने की आवश्यकता है और पूरी प्रक्रिया को समझना चाहिए। अगर आप इसमा कानून की पृष्ठभूमि को समझना चाहते हैं तो पहले 'दादन प्रथा' शब्द को समझ लें जो ओडिशा में एक परंपरागत स्थिति रही है। इसके तहत आप मज़दूरों को कुछ पेशगी रकम देते हैं और उस पेशगी के बदले में आप उस मज़दूर से ये वादा लेते हैं कि वह बाद में मज़दूरी के ज़रिए उस कर्ज़ को चुकाएगा। ऐतिहासिक रूप से 'दादन प्रथा' यही है और कुल मिलाकर ये जबरिया मज़दूरी या बंधुआ मज़दूरी से मिलती-जुलती दिखायी पड़ती है। इस्मा कानून वास्तव में संकटग्रस्त प्रवासन के प्रवाह और स्तर को ध्यान में रखते हुए अधिनियमित किया गया था - यानी मजबूरी में होने वाले पलायन को रोकने के लिए। मैं इस तरह के पलायन को बंधुआ मज़दूरी पलायन कहता हूं। अगर आप इतिहास को पढ़ें तो ओडिशा से बहुत सारे लोग दक्षिण के सारे राज्यों की तरफ पलायन करते दिखायी पड़ते हैं। मैं आपका ध्यान प्रख्यात पत्रकार पी. साईनाथ की किताब 'एवरीवन लव्ज़ ए गुड ड्राउट' (अच्छा अकाल सबको अच्छा लगता है) की तरफ आकर्षित करना चाहूंगा। ये किताब हमें नब्बे के दशक के बाद बंधुआ मज़दूरी पलायन,

इस्मा कानून वास्तव में संकटग्रस्त प्रवासन के प्रवाह और स्तर को ध्यान में रखते हुए अधिनियमित किया गया था। ... जिस दशक में इसमा कानून को पारित किया गया उसी दशक में ठेका मज़दूर कानून, 1970, बंधुआ मज़दूरी कानून, 1976 जैसे कानून भी पारित किये गये क्योंकि समूची अर्थव्यवस्था की शक्ल तेज़ी से बदल रही थी। देश एक नए दौर में दाखिल हो रहा था, एक औद्योगिक अर्थव्यवस्था बनने को आतुर था। मगर दूसरी तरफ ग्रामीण अर्थव्यवस्था तार-तार थी, लोगों के पास नौकरियां नहीं थीं, लोग सामंती व्यवस्था से तंग आ चुके थे और लिहाज़ा, शहरों की तरफ पलायन करते जा रहे थे। ... उसी दौरान बंधुआ मज़दूरी प्रथा उन्मूलन कानून, 1976 जैसे सामाजिक कानून बने। यह कानून इंदिरा गांधी के 15 सूत्री कार्यक्रम का हिस्सा थे। उसी लहर में इस बात को भी मान्यता मिली कि देश विकास के एक अलग दौर से गुज़र रहा है, लोग तेज़ी से पलायन कर रहे हैं, रोज़गार संबंधों के बारे में

ओडिशा में आए विशाल चक्रवात के बाद हुए पलायन, चक्रवात से ग्रामीण अर्थव्यवस्था के ध्वस्त होने के बारे में बताती है। यह किताब हमें दिखाती है कि बंधुआ मज़दूरी के हालात में किस तरह लोग पलायन करने लगे, सामाजिक-राजनीतिक अर्थव्यवस्था कैसी थी, श्रम बाज़ार की राजनीतिक अर्थव्यवस्था किस हाल में थी, किस तरह पूरा राज्य एक भयानक आर्थिक संकट में फंसा हुआ था, एक गहरी जनसांख्यकीय असमानता की स्थिति पैदा हो चुकी थी। उदाहरण के लिए, जब ओडिशा को देखते हैं तो तटीय ओडीशा आर्थिक रूप से थोड़ी बेहतर स्थिति में दिखायी देता है। यहां बेहतर उत्पादकता है और संसाधनों तक लोगों की पहुंच भी बेहतर है जबकि पश्चिमी ओडीशा में सूखे वगैरह की वजह से भयानक संकट के दर्शन होते हैं। साईनाथ ने अपनी किताब में इन्ही चीज़ों का ब्यौरा दिया है। अलग-अलग किस्म के आर्थिक संकटों का चक्र और समाज के ऐसे अलग-अलग संकट जो लोगों को दूसरे राज्यों की ओर पलायन करने को मजबूर करते हैं। 'दादन प्रथा' ऐसे ही हालात में शुरू की गयी थी और ये हमारे समाज की परंपरागत वर्गीय और जातीय बनावट, सामंती व्यवस्था और अभिजात्य समुदायों द्वारा लोगों को बंधुआ बनाकर रखने के पूरे माहौल में शुरू होती है। कमोबेश यही हालत पूरे भारत में थी मगर इसमा कानून का इतिहास 'दादन प्रथा' से ही शुरू होता है।

लिहाज़ा, जिस दशक में इसमा कानून को पारित किया गया उसी दशक में ठेका मज़दूर कानून, 1970, बंधुआ मज़दूरी कानून, 1976 जैसे कानून भी पारित किये गये क्योंकि समूची अर्थव्यवस्था की शक्ल तेज़ी से बदल रही थी। देश एक नए दौर में दाखिल हो रहा था, एक औद्योगिक अर्थव्यवस्था बनने को आतुर था। मगर दूसरी तरफ ग्रामीण अर्थव्यवस्था तार-तार थी, लोगों के पास नौकरियां नहीं थीं, लोग सामंती व्यवस्था से तंग आ चुके थे और लिहाज़ा, शहरों की तरफ पलायन करते जा रहे थे। आपको याद हो तो अंबेडकर ने खुद दलितों से ये आवाह्न किया था कि यदि वे जाति व्यवस्था की बेड़ियों से मुक्त होना चाहते हैं और तरक्की करना चाहते हैं तो उन्हें गांवों से शहरों में जाना होगा। खैर, उसी दौरान बंधुआ मज़दूरी प्रथा उन्मूलन कानून, 1976 जैसे सामाजिक कानून बने। यह कानून इंदिरा गांधी के 15 सूत्री कार्यक्रम का हिस्सा थे। उसी लहर में इस बात को भी मान्यता मिली कि देश विकास के एक अलग दौर से गुज़र रहा है, लोग तेज़ी से पलायन कर रहे हैं, रोज़गार संबंधों के बारे में नियम बनाने की ज़रूरत है ताकि प्रवासी मज़दूरों को दूसरे राज्यों में जाने पर भी न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा ज़रूर मिले। तो कुल मिलाकर इन्हीं सारी चीज़ों की पृष्ठभूमि में इसमा कानून को पारित करने की ज़रूरत महसूस की गई थी।

भारती अली: बेशक, ये समझने के लिए इतिहास और संदर्भ को समझना बहुत ज़रूरी है कि अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर कानून (इसमा) जैसे कानून को क्यों लागू किया गया होगा। अब आप हमें ये बताएं कि इसमा कानून के मुख्य प्रावधान कौन-कौन से हैं? कौन सी ऐसी बातें हैं जो हमारे पाठकों को जाननी चाहिए?

चंदन कुमार: हमें इसमा कानून के चार पहलुओं पर खासतौर से ध्यान देना चाहिए। सबसे पहले तो हमें इस बात को समझना चाहिए कि मजबूरी में किया गया प्रवासन एक बहुत गंभीर और वास्तविक समस्या है। कोई न कोई कानून होना चाहिए जो ऐसे प्रवासन की प्रक्रिया में 'मजबूरी के हालात' को अंकुश में रख सके। दूसरा पहलू मज़दूर आंदोलन की उम्मीदों से जुड़ा हुआ है। जब मज़दूर संकट और शोषण से जूझते हैं और शहरों या अनजान इलाकों की तरफ बढ़ते हैं तो बहुत असुरक्षित स्थिति में होते हैं। इसके बाद हमें ये देखना चाहिए कि प्रवासी मज़दूरों को श्रम कानूनों के दायरे में कैसे लाया जाए ताकि उनको भी वेतन, सामाजिक सुरक्षा, रोज़गार संबंधों के नियमों के दायरे में लाया जा सके। चैथा पहलू यह है कि इन मज़दूरों पर राज्य पूरा ध्यान दें। श्रम अधिकार कानून मोटे तौर पर इन चार पहलुओं से ही जुड़े होते हैं। जब हम मज़दूरी की बात करते हैं तो हमारे पास न्यूनतम मज़दूरी कानून है। जब हम सामाजिक सुरक्षा की बात करते हैं तो हमारे पास ईएसआईसी, ईपीएफओ वगैरह कई तरह के कानून हैं। रोज़गार संबंधों के सवाल पर औद्योगिक विवाद कानून, 1947; औद्योगिक रोज़गार (स्थायी आदेश) कानून, 1946 वगैरह कई कानून हैं। इसमा कानून इन सारे कानूनों के प्रावधानों को एक जगह लेकर आता है ताकि प्रवासी मज़दूरों को भी ये सारे श्रम अधिकार मिल सकें जो पूरे मज़दूर वर्ग के लिए बनाए गए हैं।

जब हम सामाजिक सुरक्षा की बात करते हैं तो हमारे पास ईएसआईसी, ईपीएफओ वगैरह कई तरह के कानून हैं। रोज़गार संबंधों के सवाल पर औद्योगिक विवाद कानून, 1947; औद्योगिक रोज़गार (स्थायी आदेश) कानून, 1946 वगैरह कई कानून हैं। इसमा कानून इन सारे कानूनों के प्रावधानों को एक जगह लेकर आता है ताकि प्रवासी मज़दूरों को भी ये सारे श्रम अधिकार मिल सकें जो पूरे मज़दूर वर्ग के लिए बनाए गए हैं।

भारती अली: जहां तक मैं समझ पा रही हूं, अगर में मज़दूर हूं और बिहार से हूं और मैं काम के लिए राजस्थान के किसी भट्टे में जाती हूं तो इसमा कानून के ज़रिए मेरे कुछ अधिकारों को सुरक्षा मिल जाती है मगर सारे अधिकारों की रक्षा नहीं हो पाएगी। मिसाल के तौर पर, न्यूनतम मज़दूरी कानून के तहत मज़दूरी की दर अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग रहती है। मुझे शायद न मालूम हो कि राजस्थान में जो न्यूनतम मज़दूरी है वो मेरे परिवार का पालन-पोषण करने के लिए काफी होगी या नहीं; या मुझे किसी दूसरे राज्य में जाना चाहिए या नहीं। सो ये सब बातें हैं जो यह तय करने में मदद देती हैं कि मैं कहां काम करने जाऊंगी, मेरी मजबूरी कितनी ज़्यादा है और काम मिलने की उम्मीद कितनी है। लिहाज़ा, मैं ये समझना चाहती हूं कि क्या इसमा जैसे कानून भी 'श्रम अधिकारों' की पूरी रक्षा कर पाते हैं? क्या आप इस तरह के कानून में मौजूद खामियों पर और रोशनी डालना चाहेंगे?

चंदन कुमार: मैं व्यक्तिगत रूप से यही मानता हूं कि श्रम अधिकारों का सवाल बाकी चीज़ों से अलग-थलग सवाल नहीं है। ये कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसे आप सिर्फ एक कानून के ज़रिए हासिल कर लेंगे। श्रम अधिकारों में राजनीतिक न्याय, आर्थिक न्याय और सामाजिक न्याय, सब आपस में गुंथे होते हैं। लिहाज़ा ये एक सोचने वाला सवाल बनता है कि क्या कोई एक कानून मज़दूरों को पूरा न्याय दिला सकता है या नहीं। हमारा देश कानून पर कानून बनाते जाने के लिए दुनिया भर में विख्यात है मगर उनमें से कितने कानून वाकई लागू होते हैं, ये तो हम सभी जानते हैं। अपने नागरिकों के प्रति, अपने लोगों के प्रति, उनके सम्मान

और प्रतिष्ठा के सवाल पर हम कितने संवेदनशील हैं ये एक बड़ा प्रश्न है और इसकी जड़ें वर्ग, जाति, जेंडर, समुदाय और भाषा आदि न जाने कितने सवालों से जुड़ी हुई है।

बात यह है कि नागरिक से पहले हम मज़दूर होते हैं, दलित होते हैं, आदिवासी होते हैं, ब्राम्हण होते हैं, राजपूत हैं, हिंदू हैं, मुसलमान हैं और न जाने क्या-क्या हैं। यानी हम कितनी सारी पहचानें लेकर घूम रहे हैं। बाबा साहेब अंबेडकर ने कहा था कि भले ही हम भारत में एक संविधान ला रहे हैं मगर यह संविधान तब तक खोखला है जब तक हम संविधान लाने की भावना और मकसद को नहीं समझेंगे। आज लोग खुलेआम कहते सुनाई पड़ते हैं कि वे संविधान की परवाह नहीं करते। अकसर (भारत के संविधान के प्रमुख लेखकों में से एक बीआर अंबेडकर का ज़िक्र करते हुए, जो दलित थे) लोग आकार बोल देते हैं है कि "एक दलित ने आकर लिख दिया तो क्या हम मान लेंगे उसको!" जब सैकड़ों लोग रोज़ इस बात की कसम खाते हैं कि "हम संविधान को नहीं मानते," तो आप ही बताइए कि ऐसे समाज में इसमा को कौन मानेगा?

जब तक हम यह यकीन नहीं करेंगे कि ये कानून मेरे लिए ही है तब तक शायद ही कोई इसको लागू करेगा, चाहे अधिकारी हों या समाज हो, कोई भी इसको गंभीरता से नहीं लेगा।

दूसरी बात, हमें ये भी समझना होगा कि हमारी अर्थव्यवस्था एक खास ढंग से बदल रही है। हमें व्यापक आर्थिक बदलावों को समझना होगा। खासतौर से नब्बे के दशक की शुरुआत में डॉ. मनमोहन सिंह ने आर्थिक उदारीकरण की जो नीतियां शुरू की थीं उनके बाद हमारी अर्थव्यवस्था में भारी बदलाव आ चुके हैं। हमें ये देखना होगा कि भारत ने दुनिया के बाज़ारों के लिए अपने दरवाज़े खोले हैं, श्रम कानूनों को कमज़ोर किया है या हटाया है। मुझे अच्छी तरह याद है कि जब एस.एम. कृष्णा कर्नाटक के मुख्यमंत्री थे तब उन्होंने जोर देकर कहा था कि भारत एक सूचना-प्रौद्योगिकी महाशक्ति बनने जा रहा है और जो कंपनियां भारत आ रही हैं वे यदि कर्नाटक में निवेश करें तो उन्हें किसी तरह के श्रम कानूनों का पालन नहीं करना पड़ेगा। आप देख सकते हैं कि किस तरह खुद एक राज्य का मुख्यमंत्री विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए बड़े-बड़े दावे कर रहा था। उसे इससे कोई फर्क नहीं पड़ रहा था कि इसके लिए भारतीय मज़दूरों की असुरक्षा और ज़्यादा बढ़ जाएगी। आप देख सकते हैं कि हम मल्टीनैशनल कंपनियों को किस तरह गुलामों जैसे मज़दूर मुहैया करा रहे हैं। श्रम शोधकर्ता के लिहाज़ से ये समझना बहुत ज़रूरी है कि इस आर्थिक बदलाव का स्वरूप क्या है और इसने प्रवासन के रुझानों को किस हद तक बदल डाला है।

आज हमें प्रवासन का एक पूरा गलियारा दिखायी देता है। ये आर्थिक गलियारा उत्तर भारत से दक्षिण भारत तक पिछले 20 सालों में ही पैदा हुआ है। सोनीपत, पानीपत, गुड़गांव से शुरू होकर ये गलियारा दिल्ली-मुंबई हाईवे पर आगे बढ़ता है। इसके बाद अलवर से उदयपुर, बड़ौदा, अहमदाबाद, सूरत और फिर मुंबई और मंगलौर से कोची के तटीय इलाकों तक जाता है। इसके अलावा बंगलौर को, चेन्नई को, तमिनाडु स्थित इरोड कोयम्बटूर गारमेंट उद्योग की तरफ एक मिडिल हाईवे (मध्य राजमार्ग) भी है। अपने अध्ययन के ज़रिए हमने यह देखने की कोशिश की है कि किस राज्य में कहां के मज़दूर आते हैं, वे क्या करते हैं, वे किस जाति से हैं, किस ज़िले से आते हैं, वगैरह। हमने खुद इस प्रवासन कॉरिडोर (गलियारे) की यात्राएं की हैं। अगर आप तटीय इलाकों के मज़दूरों को देखें तो ये लोग कौन हैं? जी हां, ये वही आदिवासी, दलित और मुसलमान हैं जो बिहार, उत्तर प्रदेश, ओडिशा, बंगाल और पूर्वोत्तर स्थित असम से भी आते हैं। वे कहीं से भी आ रहे हों सबसे उत्पीड़ित और ग़रीब तबकों के लोग हैं। हमें मालूम है कि पूर्वोत्तर में हालात किस तरह के रहे हैं, किस तरह के सशस्त्र संघर्षों की वजह से यहां के बहुत सारे लोग काम करने के लिए बाहर जाते हैं क्योंकि यहां कोई उद्योग नहीं हैं, ऐसी आर्थिक गतिविधियां नहीं हैं जिनके सहारे आप जीवनयापन कर सकें। लोग समूचे पूर्वी और मध्य भारत से भी पलायन कर रहे हैं। छत्तीसगढ़ और झारखंड से भी बड़ी तादाद में लोग जाते हैं। स्थिति की गंभीरता को दिखाने के लिए मैं आपको कुछ उदाहरण देता हूं।

अगर आप सूरत के पावरलूम उद्योग में जाएं तो वहां आपको आठ लाख से ज़्यादा मज़दूर ओडिशा के सिर्फ एक गंजम ज़िले के मिलेंगे। जम्मू-कश्मीर के समूचे भट्टा उद्योग में जितने भी मज़दूर हैं वे छत्तीसगढ़ के सिर्फ दो जिलों से आते हैं - जांजगीर और चांपा। अगर आप महाराष्ट्र और गुजरात के मैन्युफैक्चरिंग उद्योग को देखें, जिसमें मोटे तौर पर कपड़े बनते हैं, तो वहां के 90 प्रतिशत मज़दूर पश्चिम बंगाल और ओडिशा के पाये जाएंगे। इसी तरह आप तमिलनाडु के इरोड, नमक्कल, तिरुपुर, कोयंबटूर आदि के कपड़ा उद्योग को देखें तो वहां 80-90 प्रतिशत मज़दूर झारखंड और ओडिशा से आयी आदिवासी महिलाएं हैं। आप ये साफ देख सकते हैं कि कौन कहां से आ रहा है, किसकी क्या जाति है, किस धर्म और समुदाय से हैं। इससे हमें क्या पता चलता है? इससे हमें पता चलता है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था किस तरीके से धराशायी हो रही है। हमने बहुत संरचनाबद्ध ढंग से लोगों को प्रवासन के लिए मजबूर कर दिया है। झारखंड, छत्तीसगढ़ और ओडिशा में खनन उद्योग खूब फैल रहा है और उसकी वजह से बड़ी तादाद में लोग विस्थापित हो रहे हैं। सामंती अर्थव्यवस्था को आज भी बढ़ावा दिया जा रहा है। लोगों को आज भी पहचान आधारित राजनीति का मोहरा बनाया जा रहा है। अगर हम ऐसे इलाकों में जाएं जहां विशाल बुनियादी

... श्रम अधिकारों का सवाल बाकी चीजों से अलग-थलग सवाल नहीं है। ये कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसे आप सिर्फ एक कानून के ज़रिए हासिल कर लेंगे। श्रम अधिकारों में राजनीतिक न्याय, आर्थिक न्याय और सामाजिक न्याय, सब आपस में गुंथे होते हैं। लिहाज़ा ये एक सोचने वाला सवाल बनता है कि क्या कोई एक कानून मज़दूरों को पूरा न्याय दिला सकता है या नहीं। हमारा देश कानून पर कानून बनाते जाने के लिए दुनिया भर में विख्यात है मगर उनमें से कितने कानून वाकई लागू होते हैं, ये तो हम सभी जानते हैं। अपने नागरिकों के प्रति, अपने लोगों के प्रति, उनके सम्मान और प्रतिष्ठा के सवाल पर हम कितने संवेदनशील हैं ये एक बड़ा प्रश्न है और इसकी जड़ें वर्ग, जाति, जेंडर, समुदाय और भाषा आदि न जाने कितने सवालों से जुड़ी हुई है।

ढांचे की परियोजनाएं चल रही हैं, बड़े बांध बन रहे हैं तो वहां भी बड़ी तादाद में लोग विस्थापित हो रहे हैं। इस तरह, आप देख सकते हैं कि हमारे सामने न जाने कितने आर्थिक और सामाजिक कारण हैं जो लोगों को रोज़ी-रोटी और ज़िंदा रहने की जद्दोजहद में अपने इलाकों से पलायन के लिए मजबूर करते हैं। इस सोच ने भी अपना योगदान दिया है कि "शहर ही आर्थिक तरक्की का इंजन होते हैं।" दरअसल सरकारें भी चाहती हैं कि लोग अपने गांव छोड़कर, अपनी सांस्कृतिक और सामाजिक जड़ों को छोड़कर, परंपरागत रोज़गारों को छोड़कर शहर आएं, यहां मज़दूरी करें, यहां की दड़बे जैसी बस्तियों में रहें। इसके बाद, डेविड हार्वी के शब्दों में, 'शहर पर अधिकार' जैसे नये नैरेटिव (आख्यान) भी पैदा होते हैं। मगर भारत जैसे देश में 'शहर के अधिकार' को कैसे साकार किया जाए जहां आज भी हमें लोग जाति, वर्ग, जेंडर, भाषा और धर्म के आधार पर बंटे दिखायी पड़ते हैं। मैं कुछ ही समय पहले बंगलौर से लौटा हूं जहां बहुत कठिन हालात बने हुए हैं। यहां कन्नडिगा और गैर-कन्नडिगा समुदायों के बीच ज़बर्दस्त संघर्ष चल रहा है। इसी तरह महाराष्ट्र में मराठियों और गैर-मराठियों के बीच खींचतान चल रही है। केवल भाषाई पहचान के आधार पर मज़दूरों को हाशिये पर ढकेला जा रहा है और इन हालात को बदलने के लिए कोई कोशिश नहीं हो रही है। हमें आर्थिक तरक्की के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए सस्ते और बंधुआ मज़दूरों की ज़रूरत है जो हमें प्रवासी मज़दूरों में आसानी से मिल सकते हैं। मगर हम इन लोगों को उनकी पहचान और अर्थव्यवस्था में उनका हिस्सा देने को तैयार नहीं हैं। लिहाज़ा उन्हें सामाजिक सुरक्षा देने के लिए कोई आगे नहीं आता। सभी राज्यों में ऐसी स्पष्ट, अड़ियल और पूंजीवादी किस्म की सोच बनी हुई है। ये सोच जानबूझकर, सुनियोजित ढंग से पैदा की गयी है। जब पूरी अर्थव्यवस्था इस मान्यता पर आधारित है कि मजबूरी में होने वाला प्रवासन अपरिहार्य है, इसको रोका नहीं जा सकता और आर्थिक तरक्की के लिए ज़रूरी भी है तो इसमा जैसे कानून क्या कर सकते हैं या क्या बदलाव ला सकते हैं?

भारती अली: इसमा को देश के किसी भी भाग में लागू किया भी गया है या नहीं?

चंदन कुमार: मेरे विचार में कोशिशें तो की गयी हैं, मगर निजी तौर पर मैंने एक भी ऐसा राज्य नहीं देखा जहां इसमा को कारगर ढंग से, असरदार ढंग से लागू किया गया हो। लिहाज़ा, इस बारे में अकसर बहस होती रही है कि इसमा कानून कितना असरदार है। 2015 के आसपास आईएलओ ने अंतर्राज्यीय प्रवासन के इन रुझानों को ध्यान में रखते हुए कुछ बेहद प्रगतिशील समझौतों पर दस्तखत करवाये थे। इनमें से एक समझौता ओडिशा और तेलंगाना सरकार के बीच था। इस समझौते में दोनों राज्यों की ज़िम्मेदारियों को तय किया गया था ताकि मज़दूरों को सुरक्षित प्रवासन का अधिकार मिल सके। उदाहरण के लिए, ये तय हुआ था कि स्रोत राज्य (ओडिशा) में प्रवासन सहायता केंद्र (माइग्रेशन फेसिलिटेशन सेंटर) खोले जाएंगे ताकि हर पंचायत, हर ब्लॉक और हर नगर परिषद में ऐसे लोगों का रजिस्टर हो जो वहां से प्रवासन कर रहे हैं। श्रम विभाग को ये सुनिश्चित करना था कि मज़दूरों के सारे ठेकेदारों का इसमा के अंतर्गत पंजीकरण कराया जाए। लाइसेंस लेने के लिए लेबर कॉन्ट्रैक्टर (मज़दूरों का ठेकेदार) को एक फीस देनी होती थी। इसके बाद ही वे मज़दूरों को दूसरे राज्यों में ले जा सकते हैं और ये उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे मज़दूरों को सही वेतन दिलवाएं, उनको समय पर वेतन मिले। मज़दूरों को यात्रा भत्ता देने और गंतव्य राज्य में मज़दूरों की सुरक्षा सुनिश्चित करने का जिम्मा भी ठेकेदारों को ही सौंपा गया था। इसके बाद, गंतव्य राज्य (तेलंगाना) में पहुंचने पर सरकार की ज़िम्मेदारी है कि वो लेबर इंस्पेक्शन की सही व्यवस्था कायम करें ताकि ईंट भट्टों, खेती, लघु उद्योगों आदि में मज़दूरों के हालात पर नज़र रखी जा सके। इसके लिए लेबर इंस्पेक्टरों को जाकर ये जांच करनी होती है कि मज़दूरों को सही वेतन मिल रहा है या नहीं, प्रवासी मज़दूरों के बच्चे स्थानीय शिक्षा व्यवस्था से जुड़ पाये हैं या नहीं, महिलाओं के लिए क्रेच की सुविधा उपलब्ध है या नहीं। मज़दूरों को सस्ते अनाज के लिए राशन की दुकानों का लाभ मिल रहा है या नहीं, उनका शोषण तो नहीं हो रहा है। इस समझौते में केंद्र सरकार की भी कुछ ज़िम्मेदारियां तय की गयी थीं क्योंकि 'श्रम' विषय संविधान की समवर्ती सूची में आता है। केंद्र सरकार को आइएलओ के साथ मिलकर समय-समय पर इस बारे में चर्चा और संवाद का भी आयोजन करना था कि अब तक क्या प्रगति हुई है। तो, आप देख सकते हैं कि कागज़ पर तो बहुत कुछ होता दिखायी दे रहा है।

... इस बारे में अकसर बहस होती रही है कि इसमा कानून कितना असरदार है। 2015 के आसपास आईएलओ ने अंतर्राज्यीय प्रवासन के इन रुझानों को ध्यान में रखते हुए कुछ बेहद प्रगतिशील समझौतों पर दस्तखत करवाये थे।

... एक समझौता छत्तीसगढ़ सरकार और कर्नाटक सरकार के बीच भी हुआ था। जिस समय राजस्थान सरकार और बिहार सरकार के बीच समझौता हुआ उस समय मैं एक्शनएड में काम कर रहा था। ... सो कुछ गंभीर कोशिशें हुई हैं, खासतौर से उस घटना के बाद, जिसमें कि ओडिशा के दो प्रवासी मज़दूरों के हाथ काट दिये गये थे।

.... हमें कुछ कामयाबी तो मिली मगर पूरी कामयाबी नहीं मिल पायी थी। जैसा कि मैंने पीछे ज़िक्र किया, यह प्रवासन हमारी आर्थिक उत्पादकता और देश की "तरक्की" का हिस्सा है। विडंबना यह है कि हमारी अर्थव्यवस्था तो फल-फूल रही है मगर ग़ुलाम मज़दूरों के दम पर। ऐसे में इन ग़ुलाम मज़दूरों की मजबूरी और उससे होने वाले पलायन को खत्म कौन करना चाहेगा?

एक समझौता छत्तीसगढ़ सरकार और कर्नाटक सरकार के बीच भी हुआ था। जिस समय राजस्थान सरकार और बिहार सरकार के बीच समझौता हुआ उस समय मैं एक्शनएड में काम कर रहा था। उस समय जयपुर में ज़री के काम के लिए गया ज़िले से बच्चों को बहुत बड़ी तादाद में लाया जाता था। मैं इस परिघटना को चाइल्ड ट्रैफिकिंग भी कह सकता हूं। उस समय हमने जयपुर में माइग्रेशन फेसिलिटेशन सेंटर खोले थे। उन दिनों हमने जयपुर के अलग-अलग औद्योगिक इलाकों से न जाने कितने बच्चों को आज़ाद कराया था। इनमें से ज़्यादातर बिहार के जहानाबाद अरबन और गया जिलों के मुसहर परिवारों के बच्चे थे। इस तरह की कुछ गंभीर कोशिशें हुई हैं, खासतौर से उस घटना के बाद, जिसमें कि ओडिशा के दो प्रवासी मज़दूरों के हाथ काट दिये गये थे। आपको याद होगा कि कुछ साल पहले ओडिशा के कुछ मज़दूरों को ईंट भट्टों में काम करने के लिए आंध्र प्रदेश ले जाया जा रहा था। उनमें से कुछ ने भागने की कोशिश की तो

पकड़े जाने पर दो लोगों के हाथ काट दिए गए थे। सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं इस मामले का संज्ञान लिया था। सुधीर भाई और मैंने इस मामले में हस्तक्षेप किया था। हमने दोनों मज़दूरों के घरवालों को बुलाया और उनके हलफ़नामे वगैरह तैयार करने में मदद की थी। उस समय बहुत हो-हल्ला मचा था। ये बड़ा राजनीतिक मसला बन गया था। उस समय स्वामी अग्निवेश भी जीवित थे और उन्हीं की वजह से हम इस मुद्दे को राजनीतिक एजेंडा पर ला पाये थे। मीडिया में हमने काफ़ी एडवोकेसी की थी। संयुक्त राष्ट्र को मजबूर किया कि वह सरकार को पत्र लिखे, मानवाधिकार उच्चायुक्त (ओएचसीएचआर) कार्यालय के ज़रिए दबाव बनाया और इससे आइएलओ भी हरकत में आ गया था। हमें कुछ कामयाबी तो मिली मगर पूरी कामयाबी नहीं मिल पायी थी। जैसा कि मैंने पीछे ज़िक्र किया, यह प्रवासन हमारी आर्थिक उत्पादकता और देश की "तरक्की" का हिस्सा है। विडंबना यह है कि हमारी अर्थव्यवस्था तो फल-फूल रही है मगर ग़ुलाम मज़दूरों के दम पर। ऐसे में इन ग़ुलाम मज़दूरों की मजबूरी और उससे होने वाले पलायन को खत्म कौन करना चाहेगा?

आईएलओ द्वारा कराये गये इन्हीं समझौतों के फलस्वरूप, ओडिशा के बोलांगीर ज़िले में बहुत उत्साह के साथ एक माइग्रेशन फेसिलिटेशन सेंटर खोला गया था। आप जानते हैं कि बोलांगीर के हालात किस तरह के हैं। ये ओडिशा से प्रवासन करने वाले मज़दूरों का बहुत बड़ा केंद्र है। मगर यहां खुले फेसिलिटेशन सेंटर को अगले ही दिन तहस नहस कर दिया गया। राज्य के ही एक विधायक की देखरेख में काम करने वाले मज़दूर ठेकेदारों के गिरोहों ने इस सेंटर की ईंट से ईंट बजा दी। ऐसे हालात में इसमा को कैसे लागू किया जा सकता है?

भारती अली: ओडिशा की घटना को हमने पिछले न्यूज़लैटर में कवर किया था। आपने जिन सारे समझौतों का ज़िक्र किया, उन सबके बावजूद आज भी क्रियान्वयन की बजाय उल्लंघन की कहानियां कहीं ज़्यादा हैं। पिछले न्यूज़लैटर में सुधीर कटियार जी ने एक और समस्या का ज़िक्र किया था - पश्चिमी ओडिशा के ठेकेदारों को हर मज़दूर के एवज में एक निश्चित रकम सरकार को अदा करनी पड़ती है और ठेकेदार ये पैसा खुद मज़दूरों से ही वसूल करते हैं। ठेकेदारों को अलग-अलग स्तर पर अलग-अलग लोगों की मुट्ठियां गरम करनी पड़ती हैं लिहाज़ा अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी कानून ही शोषण का ज़रिया बन जाता है। लिहाज़ा, मेरी सोच यह है कि (क) हम इन कानूनों को बनाते हैं, (ख) तमाम वजहों से उनको लागू नहीं किया जाता, और (ग) क्रियान्वयन के नाम पर हो रहे भ्रष्टाचार और शोषण को रोकने के लिए कोई निगरानी व्यवस्था नहीं है। इसमा जैसे कानूनों के क्रियान्वयन पर नज़र रखने के लिए हमारे पास पर्याप्त संख्या में लेबर इंस्पेक्टर नहीं हैं। तो क्या आपको लगता है कि हमें अभी भी इसमा के क्रियान्वयन के लिए ज़ोर लगाते रहना चाहिए? यदि हां तो इसके क्रियान्वयन और निगरानी के विषय में आपका क्या सुझाव है? क्या करना चाहिए, कैसे करना चाहिए? कोविड महामारी ने हमें कई सबक सिखाए हैं। अब सरकार इस बारे में बात करने लगी है कि प्रवासी मज़दूरों के आवागमन पर नज़र रखी जाए। मगर इसकी आलोचना भी हुई है क्योंकि नज़र रखने का मतलब है कि आप इन लोगों की प्राइवेसी (गोपनीयता) में दखल देंगे। लिहाज़ा, नज़र किस हद तक रखी जाए? तो, नियमन की पूरी प्रक्रिया, प्रवासी मज़दूरों के पंजीकरण और पूरी प्रक्रिया में होने वाले भ्रष्टाचार की निगरानी के लिए क्या किया जाना चाहिए?

चंदन कुमार: इसका जवाब कैसे दिया जाए ये तो मुझे भी नहीं मालूम। मुझे माफ़ कीजिए मगर ये निराशा मेरे अनुभव से पैदा हुई है। आपको "हार्वेस्ट ऑफ हंगर" डॉक्यूमेंटरी कभी देखनी चाहिए। यह डॉक्यूमेंटरी रूपश्री नंदा ने बनायी है जो फिलहाल सीएनएन आईबीएन की पत्रकार हैं और इसका निर्माण एक्शनएड ने किया था। इस डॉक्यूमेंटरी को एक नैशनल एवार्ड भी मिला था। ऐक्शनएड के उस समय के कंट्री डायरेक्टर हर्ष मंदर ने प्रवासियों के जीवन को दर्शाने के लिए बिलासिनी की मशहूर केस स्टडी की थी। उसके बाद यह डॉक्यूमेंटरी आयी थी जिसने प्रवासन की पूरी प्रक्रिया को सामने रखा था। यह फिल्म बताती है कि ठेकेदार किस तरह मज़दूरों को पेशगी देते हैं, कैसे उनका शोषण होता है और किस तरह मज़दूर एक राज्य से दूसरे राज्य के लिए निकल पड़ते हैं। यह फिल्म कांटामाझी नाम के एक छोटे-से रेलवे स्टेशन को दिखाती है - वहां मज़दूर कैसे पहुंचते हैं, ट्रेन में चढ़ने से पहले उन्हें जीआरपी के लोगों को पैसा देना पड़ता है, ट्रेन पर चढ़ने के बाद उन्हें जगह-जगह माफिया के लोगों को पैसे देने पड़ते हैं, इसके बाद वे विशाखापटनम स्टेशन पहुंचते हैं। यहां से उन्हें हैदराबाद और बंगलौर आदि भेजने के लिए एक और स्टेशन पर ले जाया जाता है। सीज़न की शुरुआत में 7-8 लाख टिकट एक ही स्टेशन से बिकते हैं। ये पूरी प्रक्रिया कैमरे में रिकॉर्ड की गयी थी। "पॉलिटिक्स आफ पावर्टी" नाम की किताब में भी प्रवासन की प्रक्रिया के बारे में बात की गयी है। कानून हो या न हो, समूची व्यवस्था गिद्धों से भरी हुई है। मज़दूरों की यात्रा, भोजन, दवाई और हर चीज़ के लिए पहले लेबर कॉन्ट्रेक्टर मज़दूरों का पैसा काट लेता है। यह पूरी व्यवस्था ही मज़दूरों का शोषण करने के लिए ही बनायी गयी है और यही इसमा के क्रियान्वयन और निगरानी के बारे में आपके सवाल का पहला जवाब है।

... यह पूरी व्यवस्था ही मज़दूरों का शोषण करने के लिए बनायी गयी है और यही इसमा के क्रियान्वयन और निगरानी के बारे में आपके सवाल का पहला जवाब है।

प्रवासी मज़दूर तो मज़दूर की श्रेणी में ही नहीं आते क्योंकि उन्हें किसी श्रम कानून के तहत मान्यता और पंजीकरण नहीं मिलता। क्या आपको लगता है कि लेबर डिपार्टमेंट इन मज़दूरों का इंस्पेक्शन करेगा? मज़दूरों से संबंधित मौजूदा विभाग और प्रावधान हमारी आज की औद्योगिक श्रम शक्ति की उम्मीदों और ज़रूरतों को पूरा नहीं कर सकती। स्वतंत्र शोधकर्ता एवं पत्रकार अनुमेहा यादव ने एक लेख में बताया है कि एक लेबर इंस्पेक्टर के तहत लगभग 60,000 फैक्ट्रियां आती हैं जिनमें 100,000 से ज़्यादा मज़दूर काम करते हैं। यानी लेबर डिपार्टमेंट (श्रम विभाग) के पास उन उद्योगों से निपटने के लिए भी क्षमता नहीं है जहां लोग अधिकृत रूप से मज़दूर की मान्यता के साथ काम कर रहे हैं। उनके पास ऐसी फैक्ट्रियों की निगरानी और दौरे का भी साधन नहीं है जो दफ्तर से सिर्फ एक-दो किलोमीटर की दूरी पर हैं। हमने मौजूदा श्रम नियमन व्यवस्था में सुधार के लिए कुछ सवाल तय किए थे और कुछ मांगें तैयार की थीं। यदि आप मेरी व्यक्तिगत राय पूछें तो लेबर डिपार्टमेंट के पास अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाले लोगों, इसकी अर्थव्यवस्था और इसमें काम करने वाले 20 करोड़ से

> प्रवासी मज़दूर तो मज़दूर की श्रेणी में ही नहीं आते क्योंकि उन्हें किसी श्रम कानून के तहत मान्यता और पंजीकरण नहीं मिलता। ... स्वतंत्र शोधकर्ता एवं पत्रकार अनुमेहा यादव ने एक लेख में बताया है कि एक लेबर इंस्पेक्टर के तहत लगभग 60,000 फैक्ट्रियां आती हैं जिनमें 100,000 से ज़्यादा मज़दूर काम करते हैं। यानी लेबर डिपार्टमेंट (श्रम विभाग) के पास उन उद्योगों से निपटने के लिए भी क्षमता नहीं है जहां लोग अधिकृत रूप से मज़दूर की मान्यता के साथ काम कर रहे हैं।

ज़्यादा प्रवासी मज़दूरों पर नज़र रखने की क्षमता ही नहीं है। लिहाज़ा इस व्यवस्था के सहारे तो श्रम कानूनों को लागू करना असंभव है। इस बात को मैं सरकारी नौकरियों में भर्ती की व्यापक बहस से भी जोड़कर देखना चाहता हूं। जब रवीश कुमार एनडीटीवी के साथ हुआ करते थे उस समय उन्होंने सरकारी नौकरियों में भर्ती के कुछ आंकड़े पेश किये थे। चाहे आंगनवाड़ी या स्कूलों में भर्ती हो, उन्होंने सरकारी नौकरियों पर कई कार्यक्रम किये थे। मगर अब तो सरकार ने भर्तियों पर ही रोक लगा दी है। अगर आप लेबर डिपार्टमेंट के दफ्तर में जाएं तो वहां केवल दो या तीन इंस्पेक्टर ही काम करते मिलते हैं। यानी हमें बिलकुल अलग तरह की एडवोकेसी करनी होगी। सबसे पहले लेबर डिपार्टमेंट में सुधार और नई भर्तियों के लिए एडवोकेसी करनी होगी। ये आपके सवाल के जवाब का दूसरा हिस्सा बनता है।

मैं और सीएलआरए के सुधीर जी एनएचआरसी के कोर ग्रुप के और उसकी बंधुआ मज़दूरी कमेटी के भी सदस्य हैं। हम इसी विषय में एनएचआरसी की दिशानिर्देशों का मसौदा तैयार करने वाली कमेटी में भी थे, जिसमें न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती द्वारा बंधुआ मुक्ति मोर्चा केस, नीरजा चैधरी केस और पीयूडीआर केस (एशिया मज़दूर केस) में दिए गए ऐतिहासिक फैसलों को लागू करने पर भी बात की गयी थी। जब हम एनएचआरसी के दिशानिर्देश तय कर रहे थे तो हमारा यही मानना था कि अगर किसी मज़दूर को न्यूनतम मज़दूरी नहीं मिल रही है तो यही माना जाएगा कि वह मज़दूर बंधुआ मज़दूर है। इसी आधार पर हमने बहुत सारे मज़दूरों को आज़ाद कराया था और उनको मुआवज़ा दिलाया था। मगर तमाम कोशिशों के बावजूद हम इसमा कानून को लागू नहीं करा पाये। हमने एनएचआरसी के साथ काफी समय तक काम किया, कलेक्टरों को चिट्ठियां लिखकर उनको कहा कि वे फलां-फलां कदम उठाएं मगर इसमा कानून तब भी लागू नहीं हुआ। इसमा कानून को लागू करना संभव ही नहीं है। प्रवासी मज़दूरों के मुद्दों को बंधुआ मज़दूरी कानून के दायरे में ही उठाया जा सकता है। इसके अलावा, इसमा को मौजूदा राजनीतिक ढुलमुलपन और मौजूदा श्रम विभागों की देखरेख में लागू करना संभव ही नहीं है। हमें ओएसएच कोड (व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्य परिस्थिति कोड, 2020) को भी पढ़ना चाहिए। मैंने इस कोड पर सांसदों के लिए एक ब्रीफिंग नोट (विवरण टिप्पणी) तैयार किया था और ये लिखा था कि यह कोड इसमा से जुड़े बहुत सारे मुद्दों को संबोधित नहीं कर पाता है। उदाहरण के लिए, अगर आप इसमा के तहत एक ऐसे ठेकेदार के साथ प्रवासन कर रहे हैं जिसके पास लाइसेंस है तो आपको निश्चित फायदे मिलने चाहिए। नए ओएसएच कोड के तहत भी यदि आप किसी मज़दूर ठेकेदार के साथ एक राज्य से दूसरे राज्य जा रहे हैं तो आपको इसमा के तहत गारंटीशुदा हक मिलते हैं। मगर 90 प्रतिशत से ज़्यादा प्रवासी मज़दूरों के पास ऐसे कोई कागज़ी साधन नहीं होते जिनके दम पर वे मज़दूर ठेकेदार के साथ अपना किसी तरह का संबंध दिखा सकें। हालांकि वे मज़दूर ठेकेदार के साथ ही जाते हैं मगर मज़दूर ठेकेदार कभी ये नहीं मानता कि ये मज़दूर उसके साथ हैं। न ही उसके पास कोई लाइसेंस मिलेगा। तो आप कैसे कह सकते हैं कि इसमा को लागू किया जा रहा है। इसमा को लागू करने के लिए बुनियादी सवाल मज़दूर ठेकेदार के साथ बनाम मज़दूर ठेकेदार के बिना प्रवासन का है। ओएसएच कोड में इसमा के तहत पंजीकृत कंपनियों पर इस कोड को लागू करने की कसौटी का सवाल दूसरा सवाल बनता है। यह कोड ऐसे संस्थानों पर लागू होता है जहां पिछले 12 महीने के दौरान कभी भी 10 या इससे अधिक अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूरों ने काम किया हो। अब, अगर आपकी कसौटी इस तरह की है तो मेरा विश्लेषण यह कहता है कि आप 90 प्रतिशत प्रवासी मज़दूरों को इस कानून के दायरे से बाहर निकाल देते हैं। ये तो सिर्फ छोटी-छोटी खामियां हैं जिनका हम पीछे ज़िक्र करते रहे हैं।

> ... मगर 90 प्रतिशत से ज़्यादा प्रवासी मज़दूरों के पास ऐसे कोई कागज़ी साधन नहीं होते जिनके दम पर वे मज़दूर ठेकेदार के साथ अपना किसी तरह का संबंध दिखा सकें। हालांकि वे मज़दूर ठेकेदार के साथ ही जाते हैं मगर मज़दूर ठेकेदार कभी ये नहीं मानता कि ये मज़दूर उसके साथ हैं। ... ओएचएस कोड में इसमा के तहत पंजीकृत कंपनियों पर इस कोड को लागू करने की कसौटी का सवाल दूसरा सवाल बनता है। यह कोड ऐसे संस्थानों पर लागू होता है जहां पिछले 12 महीने के दौरान कभी भी 10 या इससे अधिक अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूरों ने काम किया हो। अब, अगर आपकी कसौटी इस तरह की है तो मेरा विश्लेषण ये कहता है कि आप 90 प्रतिशत प्रवासी मज़दूरों को इस कानून के दायरे से बाहर निकाल देते हैं।

भारती अली: तो आप सरकार को, ट्रेड यूनियनों (मज़दूर संघ) को और प्रवासी मज़दूरों को क्या सुझाव देना चाहते हैं? या बस हम हाथ बांधकर बैठ जाएं और सब कुछ किस्मत पर छोड़ दें?

चंदन कुमार: प्रवासी मज़दूरों की ऐसी स्थिति सिर्फ भारत का मामला नहीं है बल्कि दुनिया भर में प्रवासी मज़दूरों के हालात इसी तरह के हैं। अगर आप बर्लिन के शहरों में जाएं तो ज़्यादातर मज़दूर तुर्की या पूर्वी यूरोपीय देशों के होते हैं। उनके साथ बाहरी लोगों जैसा ही बर्ताव किया जाता है। उत्तरी अमेरिका में हिस्पानी मूल के लोग होते हैं। वहां भी नस्लवाद और भेदभाव बेहिसाब है। दुनिया भर में अर्थव्यवस्था की बनावट ही ऐसी है कि मान्यता रहित या अदृश्य मज़दूरों के साथ होने वाली गैर-बराबरी पर चोट ही नहीं की जा सकती। दुनिया में जो भी संपदा पैदा हो रही है वह ग़ुलामी या ग़ुलामी जैसे हालात की वजह से पैदा हो रही है। अगर आप भारत की बात करते हैं तो यहां जाति, जेंडर, भाषाई और दूसरे विभाजनों की वजह से हालात और भी ज़्यादा जटिल हैं। जहां तक ट्रेड यूनियनों की बात है तो भारत का ट्रेड यूनियन आंदोलन तो अब वेंटीलेटर पर पड़ा है। अगर आप यूरोप में देखें तो ट्रेड यूनियनों ने ही राजनीतिक पार्टियां खड़ी की थीं जबकि भारत में राजनीतिक पार्टियों ने ट्रेड यूनियन खड़ी की हैं। कांग्रेस ने इंटक का गठन किया। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी ने सीटू का गठन किया।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने एटक का गठन किया। एचएमएस का गठन उस समय की सोशलिस्ट पार्टी ने किया था। बीएमएस का संबंध आरएसएस से है। ट्रेड यूनियन आंदोलन का उदय औद्योगिक अर्थव्यवस्था के उदय के साथ हुआ था और माना जाता था कि जब मज़दूर नौकरी के लिए कारखाने में आएंगे तो उनको संगठित किया जाएगा। अस्सी के दशक के बाद ये हालात बदलने लगे और नब्बे के दशक के बाद ये सोच अप्रासंगिक दिखायी देने लगी। हमारी ट्रेड यूनियनें आज भी इंग्लैंड में अठारहवीं शताब्दी में हुई औद्योगिक क्रांति के युग में ही जी रही हैं। ट्रेड यूनियनों ने ये सीखा ही नहीं कि अगर फैक्ट्री न हो, अगर फैक्ट्री गेट के दायरे के बाहर मज़दूरों को संगठित करने का रास्ता न हो तो मज़दूरों को संगठित कैसे किया जाएगा। दूसरी बात, ट्रेड यूनियनें अपनी-अपनी राजनीतिक विचारधारा से जुड़ी हुई हैं; उनके अपने राजनीतिक आका होते हैं। अगर केरल और तमिलनाडु जैसे सुदूर दक्षिण के राज्यों में जाएं तो वहां भी द्रविड़ियन राजनीति, प्रगतिशील सोच और पेरियार व अंबेडकर जैसे विचारकों की प्रेरणा के बावजूद प्रवासी मज़दूरों के मुद्दों पर ज़्यादा बात नहीं होती। मैंने प्रगतिशील लोगों और आंदोलनों में भी 'भद्दे राष्ट्रवाद' के चिन्ह देखे हैं। त्रिवेंद्रम, कोच्ची, चेन्नई या मदुरई में आप किसी भी लेबर चौक पर जाकर खड़े हो जाइए आपको बेशुमार लोग मज़दूरी की तलाश में खड़े मिलेंगे। वे यहां मिलने वाली बेहतर मज़दूरी की उम्मीद में इन राज्यों की ओर खिंचे चले आते हैं। यहां मैं गैर-औद्योगिक मज़दूरों की, मुख्य रूप से शारीरिक श्रम की बात कर रहा हूं। प्रगतिशीलता के बावजूद इन दक्षिणी राज्यों में प्रवासी मज़दूरों के प्रति एक गहरी नापसंदगी और हिचकिचाहट है जबकि वे उनकी अर्थव्यवस्था का एक अहम हिस्सा हैं। और अब इस आशय का नया डर भी पैदा हो रहा है कि अगर प्रवासी मज़दूरों का पंजीकरण किया जाता है और उन्हें वोट देने का हक मिलता है तो राज्य की राजनीतिक संरचना बदल जाएगी और बीजेपी को पैठ बनाने का मौका मिलेगा। बुनियादी बात यह है कि कृत्रिम और नकली राष्ट्रवाद अधिकारों, सामाजिक न्याय, आर्थिक न्याय और राजनीतिक न्याय पर हावी होता जा रहा है जबकि भारतीय संविधान से इसकी गारंटी मिली हुई है।

दुनिया भर में अर्थव्यवस्था की बनावट ही ऐसी है कि मान्यता रहित या अदृश्य मज़दूरों के साथ होने वाली गैर-बराबरी पर चोट ही नहीं की जा सकती। दुनिया में जो भी संपदा पैदा हो रही है वह ग़ुलामी या ग़ुलामी जैसे हालात की वजह से पैदा हो रही है। अगर आप भारत की बात करते हैं तो यहां जाति, जेंडर, भाषाई और दूसरे विभाजनों की वजह से हालात और भी ज़्यादा जटिल हैं। ... ट्रेड यूनियन आंदोलन तो अब वेंटीलेटर पर पड़ा है। अगर आप यूरोप में देखें तो ट्रेड यूनियनों ने ही राजनीतिक पार्टियां खड़ी की थीं जबकि भारत में राजनीतिक पार्टियों ने ट्रेड यूनियन खड़ी की हैं। ... ट्रेड यूनियनों ने ये सीखा ही नहीं कि अगर फैक्ट्री न हो, अगर फैक्ट्री गेट के दायरे के बाहर मज़दूरों को संगठित करने का रास्ता न हो तो मज़दूरों को संगठित कैसे किया जाएगा। ... प्रगतिशीलता के बावजूद इन दक्षिणी राज्यों में प्रवासी मज़दूरों के प्रति एक गहरी नापसंदगी और हिचकिचाहट है जबकि वे उनकी अर्थव्यवस्था का एक अहम हिस्सा हैं। ... बुनियादी बात यह है कि कृत्रिम और नकली राष्ट्रवाद अधिकारों, सामाजिक न्याय, आर्थिक न्याय और राजनीतिक न्याय पर हावी होता जा रहा है जबकि भारतीय संविधान से इसकी गारंटी मिली हुई है।

भारती अली: नागर समाज संगठनों (सिविल सोसाइटी ऑर्गनाइज़ेशन्स - सीएसओ) का दायरा सिमटता जा रहा है। इसको देखते हुए, आने वाले सालों में अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूरों और उनके अधिकारों के लिहाज़ से कौन से दो या तीन ऐसे मुद्दे हैं जिन पर नागर समाज संगठनों को खासतौर से जोर देना चाहिए?

चंदन कुमार: अगर मेरी आवाज़ में थोड़ा तीखापन सुनाई पड़े तो मुझे माफ़ कर दीजिएगा। पर ये "सिविल सोसाइटी" है क्या चीज़? इनमें से ज़्यादातर वे लोग हैं जो एनजीओ चला रहे हैं। वे प्रोजेक्ट लेते हैं, उन पर काम करते हैं, प्रोजेक्ट खत्म करते हैं और अगला प्रोजेक्ट लेकर आगे बढ़ जाते हैं। पिछले प्रोजेक्ट के दौरान जो कुछ हुआ था वो ठप हो जाता है। ट्रेड यूनियन भी सिविल सोसाइटी का हिस्सा हैं मगर मैंने पहले ही इस बात का ज़िक्र किया था कि वे राजनीतिक दलों की शाखा होती हैं और लिहाज़ा वैसे काम नहीं कर सकती जैसे उन्हें काम करना चाहिए। उसके बाद "सिविल सोसाइटी" के नाम पर बचा क्या? हो सकता है कुछ प्रगतिशील लोग हों जो कुछ करना चाहते हों मगर उनके पास इसके लिए ज़रूरी साधन और हालात नहीं होंगे। जब तक आप अपने मुद्दों और चिंताओं को राजनीतिक सवालों में तब्दील नहीं करेंगे, तब तक कुछ भी बदलने वाला नहीं है।

... जब तक आप अपने मुद्दों और चिंताओं को राजनीतिक सवालों में तब्दील नहीं करेंगे, तब तक कुछ भी बदलने वाला नहीं है।

... हमें इस बात का विश्लेषण करना चाहिए कि अर्थव्यवस्था और आर्थिक तरक्की के लिए प्रवासी मज़दूरों का योगदान क्या है ...

... इस तरह के काम के लिए एक ज़रूरत है एक दीर्घकालिक विज़न, एक दीर्घकालिक कार्यक्रम, गहरी लगन व प्रतिबद्धता और ऐसे लोगों की जो राजनैतिक सोच राजखते हों और इन मुद्दों पर कुछ करना चाहते हों। ... इस बहस को एक राजनीति एजेंडा में तब्दील करने के लिए एक रोडमैप और योजना की ज़रूरत है।

एक लेबर रिसर्चर, एक सोशल रिसर्चर के रूप में हमें इस बात का विश्लेषण करना चाहिए कि अर्थव्यवस्था और आर्थिक तरक्की के लिए प्रवासी मज़दूरों का योगदान क्या है; प्रवासी मज़दूर देश को कैसे चला रहे हैं। हमें इस बहस को और पुख्ता करके हर चुनाव में इस सवाल को उठाना चाहिए। मैं नहीं कह सकता कि नागर समाज किस हद तक चुनावों में इस सवाल को आगे ले जा सकता है क्योंकि वे तभी तक मुंह खोलने में सक्षम हैं जब तक उनके पास कोई प्रोजेक्ट है। इस तरह के काम के लिए एक ज़रूरत है एक दीर्घकालिक विज़न, एक दीर्घकालिक कार्यक्रम, गहरी लगन व प्रतिबद्धता और ऐसे लोगों की जो राजनैतिक सोच राजखते हों और इन मुद्दों पर कुछ करना चाहते हों। वरना हम एक-दो शोध करेंगे बहुत सारी रिपोर्टें प्रकाशित करेंगे और एक ही जगह खड़े रहेंगे। जब तक हम इन रिपोर्टों को ज़मीन पर खड़े लोगों के साथ नहीं जोड़ेंगे तब तक ये बहस आगे नहीं बढ़ेगी। इस बहस को एक राजनीति एजेंडा में तब्दील करने के लिए एक रोडमैप और योजना की ज़रूरत है।

भारती अली: मेरे खयाल में सवाल आशा-निराशा का नहीं है बल्कि बहुत सारे मुद्दों को एक साथ देखने और इस विषय पर एक व्यापक परिप्रेक्ष्य विकसित करने का है। मगर हां, ये सच है कि जैसे ही प्रोजेक्ट खत्म होता है, बहुत सारी चीजें खत्म हो जाती हैं क्योंकि कई साल तक चलने वाले प्रक्रिया केंद्रित हस्तक्षेपों के लिए बहुत सारे साधनों की ज़रूरत होती है। ऐसे हालात में कौन से एक या दो मुद्दे हैं जिन पर हम आगे काम जारी रख सकते हैं और फंडिंग जुटाने की कोशिश की जा सकती है?

चंदन कुमार: हमारे पास करने के लिए कुछ अच्छे उदाहरण हैं। अगर आप फिलीपींस में अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन को देखें, तो पाएंगे कि वहां की सरकार यूएई और कुवैत के साथ बाकायदा समझौते करती है। इसका मकसद ये है कि जब मज़दूर फिलीपींस से रवाना हों तो ग्राहक देश उनकी पूरी ज़िम्मेदारी लें। अगर बिहार सरकार, छत्तीसगढ़ सरकार और दूसरी राज्य सरकारें भी यही रवैया अपनाएं तो हालात में निश्चित रूप से कुछ सुधार आ सकता है। अगर आप खाड़ी के देशों में भारतीय, नेपाली और पाकिस्तानी मज़दूरों की हालत देखें तो बंधुआ मज़दूरी से भी बदतर हालात आपको दिखायी पड़ते हैं। हालांकि सरकार भी ये मानती है कि प्रवासी मज़दूरों की वजह से देश ने आर्थिक तरक्की की है मगर क्या बिहार को इन मज़दूरों की तरफ से भेजा गया विप्रेषित धन मिलता है? हमें मज़दूरों द्वारा विप्रेषण के माध्यम से भेजे जाने वाले पैसे के इस सवाल पर और शोध करना चाहिए और उसे राजनीतिक अर्थव्यवस्था से जोड़कर इसके बारे में अपनी आवाज़ उठानी चाहिए। हमें एक राजनीतिक नैरेटिव की ज़रूरत है। एक राजनीतिक नैरेटिव तभी खड़ा किया जा सकता है जब हमारे पास अच्छा डेटा, अच्छी-खासी तार्किक समझ और बहसें हों। हमें इस आशय के साक्ष्य जुटाने होंगे और लोगों/साझीदार संगठनों/संबंधित पक्षों के छोटे-छोटे समूह ढूंढने होंगे जो इस डेटा को राजनीतिक रूप देकर आगे ले जा सकें। प्रवासी मज़दूरों के एजेंडा को आगे बढ़ाने के लिए ये अगला कदम हो सकता है।

हालांकि सरकार भी ये मानती है कि प्रवासी मज़दूरों की वजह से देश ने आर्थिक तरक्की की है मगर क्या बिहार को इन मज़दूरों की तरफ से भेजा गया विप्रेषित धन मिलता है? हमें मज़दूरों द्वारा विप्रेषण के माध्यम से भेजे जाने वाले पैसे के इस सवाल पर और शोध करना चाहिए और उसे राजनीतिक अर्थव्यवस्था से जोड़कर इसके बारे में अपनी आवाज़ उठानी चाहिए।

भारती अली: और साक्ष्य जुटाने का सवाल ऐसा है जिस पर किसी एनजीओ को कोई पैसा नहीं देना चाहता। दुख की बात यह है कि हमें ज़मीनी धरातल पर कोई खास प्रगति दिखायी नहीं देती। हम प्रवासी मज़दूरों के लिए योजनाओं की पोर्टेबिलिटी की बात करते हैं। नये ओएसएच कोड में भी योजना की पोर्टेबिलिटी का ज़िक्र किया गया है और लक्ष्य राज्यों में इन योजनाओं तक मज़दूरों की पहुंच पर ज़ोर दिया गया है। हाल ही में राजस्थान में सीएलआरए की टीम ने छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश और बिहार के 753 अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूर परिवारों को 'वन नेशन वन राशन कार्ड' (ओएनओआरसी) योजना के तहत राशन दिलाने में सफलता प्राप्त की है। एनजीओ कुछ कोशिश तो कर सकते हैं मगर उनकी भी सीमाएं हैं। हमारे देश की आबादी एक अरब से ज़्यादा है जिसमें प्रवासियों की एक विशाल आबादी ओएनओआरसी (वन नेशन वन राशन कार्ड) योजना के तहत अनाज पाने के लिए भी जद्दोजहद कर रही है। जहां हम एक पोर्टेबल योजना भी लागू नहीं कर पा रहे हैं, वहां हम स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा आदि पर अन्य योजनाओं की पोर्टेबिलिटी कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं?

चंदन कुमार: यहां मैं कोविड महामारी के दौरान 2020 में महाराष्ट्र में घटी एक घटना का ज़िक्र करना चाहूंगा। इस अनुभव से हमें ई-श्रम पोर्टल पर सर्वोच्च न्यायालय में दायर केस के लिए एक रूपरेखा तय करने में भी मदद मिली है। हुआ यूं कि हमने एक आईएएस अधिकारी से संपर्क किया जो ज़िला परिषद के सीईओ भी थे। हमने उनसे आग्रह किया कि वे एक ऐसी छोटी सी व्यवस्था शुरू करें जिसमें प्रवासी मज़दूरों को अगले दो महीने तक पीडीएस (यानी राशन व्यवस्था) के तहत भोजन मिलता रहे। उन्हें ये बात समझ में आयी और उन्होंने टोकन जारी कर दिए। हम छह महीने तक 46,000 मज़दूरों को राशन के लिए टेंपरेरी टोकन मुहैया कराने में कामयाब रहे। आप बताइए कि राशन की पोर्टेबिलिटी को लागू करने के लिए हम किसका और क्यों इंतज़ार कर रहे हैं? जब तक राजनीतिक इच्छाशक्ति थी तो एक आईएएस अधिकरी भी संकट के समय ठोस कदम उठाने में कामयाब रहा। यहां विश्वास और राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव दिखायी पड़ रहा है।

... कोविड महामारी के दौरान 2020 में ... हम छह महीने तक 46,000 मज़दूरों को राशन के लिए टेंपरेरी टोकन मुहैया कराने में कामयाब रहे। ... राशन की पोर्टेबिलिटी को लागू करने के लिए हम किसका और क्यों इंतज़ार कर रहे हैं?

जब तक हम राजनीतिक इच्छाशक्ति पर ज़ो नहीं देंगे, अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूरों की चिंताओं को राजनीतिक मुद्दा नहीं बनाएंगे, ताकि लोग इन मुद्दों पर वोट देने लगें, तब तक कुछ बदलने वाला नहीं है।

भारती अली: अंतर्राज्यीय प्रवासी श्रमिक कानून का क्रियान्वयन विफल हो चुका है। अब हम योजनाओं की पोर्टेबिलिटी के बारे में बात करने लगे हैं। यहां भी हम तरह-तरह की कठिनाइयों से जूझ रहे हैं और अगर राजनीतिक इच्छाशक्ति नहीं होगी तो कुछ खास हासिल नहीं होगा और फिर हम किसी नये जुमले की तरफ बढ़ जाएंगे। ये सिलसिला कहां जाकर खत्म होता है?

चंदन कुमार: जब तक हम राजनीतिक इच्छाशक्ति पर ज़ो नहीं देंगे, अंतर्राज्यीय प्रवासी मज़दूरों की चिंताओं को राजनीतिक मुद्दा नहीं बनाएंगे, ताकि लोग इन मुद्दों पर वोट देने लगें, तब तक कुछ बदलने वाला नहीं है।

हक: सेंटर फॉर चाइल्ड राइट्स श्री चंदन कुमार का बेहद आभारी है जिन्होंने अपने अनुभव और विचार हमारे साथ साझा किए। विशेषज्ञों के साथ अभी तक के सभी साक्षात्कारों में ये बात साफ दिखायी देती है कि राष्ट्रीय स्तर पर साक्ष्य जुटाना और मौजूदा चिंताओं को राजनीतिक एजेंडा का हिस्सा बनाना होगा।

चलते - चलते ...

"सात भारतीय शहरों के प्रत्येक 10 में से 8 प्रवासी बच्चे ऐसे कार्यस्थलों पर काम करते हैं जहां पढ़ाई-लिखाई का कोई बंदोबस्त नहीं है। जो बच्चे किसी ग्रामीण प्रवासी परिवार में बड़े हुए हैं उनमें से 28 प्रतिशत निरक्षर हैं या उनके पास केवल प्राथमिक शिक्षा है। मौसमी प्रवासी परिवारों के 40 प्रतिशत बच्चे खुद स्कूल जाने की बजाय मज़दूरी की गर्त में चले जाते हैं।"

\- यूनेस्को ग्लोबल एजुकेशन मॉनिटरिंग रिपोर्ट, 2019

बदलाव की कुंजी

बच्चों को स्कूल ज़रूर जाना चाहिए

बच्चों के शुरुआती सालों में निवेश ज़रूरी है

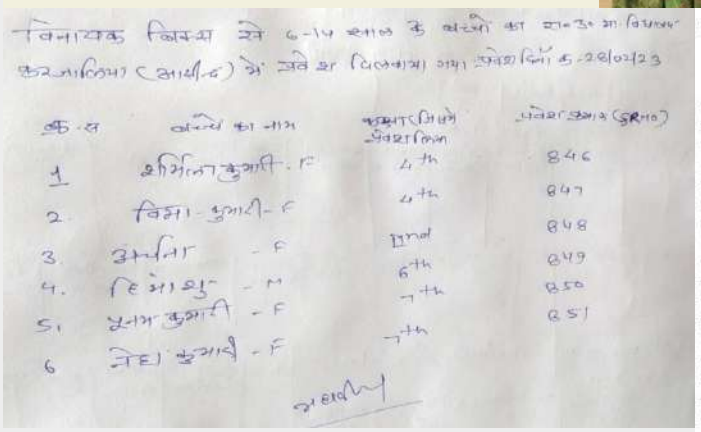

विनायक क्लिनिक से 6-14 साल के बच्चों का रा.उ.मा. विद्यालय [illegible] (आरवी-ए) में प्रवेश दिलवाया गया प्रवेश दिनांक 28/02/23

क्र.सं.	बच्चे का नाम	कक्षा जिसमें प्रवेश लिया	प्रवेश क्रमांक (SR no)
1	शर्मिला कुमारी - F	4th	846
2	विमला कुमारी - F	4th	847
3	अनिता - F	2nd	848
4	हिमांशु - M	6th	849
5	पूनम कुमारी - F	7th	850
6	नेहा कुमारी - F	7th	851

ईंट भट्टे पर एसएमसी और वीएचएसएनसी बैठक

अजमेर, 15 जून (दिलीप शर्मा): सेन्टर फॉर लेबर रिसर्च एण्ड एक्शन संस्थान के तत्वावधान में एसएमसी व वीएचएसएनसी की बैठक का आयोजन हुआ। यह बैठक जेएमडी ईंट भट्टा बूबानी गांव में सीएलआरए संस्था द्वारा संचालित बालवाड़ी केन्द्र पर आयोजित हुई, जिसमें समिति के 15 सदस्यों की भागीदारी रही। बैठक का संचालन ब्लॉक कोऑर्डिनेटर छोटू सिंह रावत द्वारा किया गया, जिसमें ईंट भट्टे पर श्रमिकों के साथ आने वाले बच्चों को शिक्षा से जोड़ने और आंगनबाड़ी में पंजीयन करवाने की रणनीति बनाई गई। छोटू सिंह रावत ने समिति के सदस्यों को बताया कि इस बार हमारे प्रयास से ईंट भट्टों के बच्चों का स्कूल और आंगनबाड़ी में पंजीयन हुआ है, लेकिन हमें प्रयास करना है कि ईंट भट्टे पर श्रमिक आते ही बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ पाएं, इसके लिए सर्वे कर एसएमसी कमेटी की तरफ से गैर आवासीय शिविर खोलने का प्रस्ताव लिया जाए या फिर बच्चों को स्कूल से जोड़ना है तो बच्चों के लिए स्कूल तक आने जाने के लिए गाड़ी की व्यवस्था भी की जाए और 0 से 5 साल तक के बच्चों का आंगनबाड़ी में पंजीयन भी समय पर हो पाए। जिला समन्वयक पंकज शर्मा ने बताया कि वीएचएसएनसी और एसएमसी समिति को एक्टिव करने के लिए हर माह सभी सदस्यों के साथ समय पर मीटिंग होनी चाहिए और हमारे गांव में स्वास्थ्य, स्वच्छता, पेयजल संबंधित मुद्दों को समिति की तरफ से भी उठाया जाना चाहिए। बालवाड़ी कार्यकर्ता प्रिया रावत ने सीएचओ ब्रजभूषण मीना को बताया की ईंट भट्टे पर सभी मजदूर टंकी से पानी पीते हैं, जिसके कारण यह पानी शुद्ध है या नहीं इसकी भी जांच होनी चाहिए। सीएचओ ने बताया की एनएम के साथ बातचीत कर इसकी जांच कराई जाएगी। एसएमसी और विएचएसएनसी समिति के सदस्यों ने ईंट भट्टे पर आने वालें बच्चों के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य के मुद्दों को उठाये जाने का आश्वासन दिया।

अजमेर : बैठक में उपस्थित संस्था के सदस्य।

HAQ Centre for Child Rights

संपर्क:

128-बी, दूसरी मंज़िल, शहपुरजट, नई दिल्ली-110049, भारत

+91-11-26497412

info@haqcrc.org

www.haqcrc.org

आगामी >>>

अगले अंक में

भट्ठा मज़दूरों के बच्चों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल

प्रवासी मज़दूरों के अधिकारों के पक्ष में हो रहे कानूनी बदलाव: सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के महत्वपूर्ण फैसलों से मिले सबक

कामयाबी की कहानियां

आइए विशेषज्ञों से बात करें: सतत विकास लक्ष्य (सस्टेनबल डेवलपमेंट गोल्स) मौसमी प्रवासी मज़दूरों और उनके परिवारों के मुद्दों के समाधान में किस तरह मददगार हैं?